१. प्रथमेश : वंश एवं चरित

प्रथमेश : वंश एवं चरित

क्र.	शीर्षक		प्रस्तुति	पृष्ठ
	प्रथमेशजी महाराजश्री का वंश परिचय			
१.	महाप्रभु वल्लभाचार्य	-	डॉ. गजानन शर्मा	१
२.	गुसांई श्री विट्ठलनाथजी	-	डॉ. गजानन शर्मा	२
३.	प्रथमेशजी के पूर्वजों की यशोगाथा	-	श्री रवजी भाई प. पटेल	३
४.	गोस्वामी श्री रणछोड़ाचार्यजी प्रथमेश	-	श्री रघुनाथ प्रसाद कटारा	११
५.	प्रथम पीठ के सेव्य स्वरूप प्रभु श्री मथुराधीशजी	-	डॉ. गजानन शर्मा	२०
६.	श्री मथुराधीश प्रभु के प्रथम सेवक श्री पद्मनाभदास	-	डॉ. गजानन शर्मा	२३

श्री रणछोड़ाचार्यजीः 'प्रथमेश'महाराजश्री का वंशपरिचय

नित्य लीलास्थ पूज्यपाद गोस्वामी श्री रणछोड़ाचार्यजी 'प्रथमेशजी' जगद्गुरू श्रीमद्वल्लभाचार्य महाप्रभुजी के वंश में प्रादुर्भूत हुए थे । श्री वल्लभाचार्यजी के पूर्वज दक्षिण भारत में आन्ध्रप्रदेश के कांकरवाड़ नामक स्थान के निवासी थे । इनके मूल पुरूष श्री यज्ञनारायणजी भट्ट हुए ,ये तैलंग ब्राह्मण थे और इस वंश की गणना कृष्ण यजुर्वेद के अंतर्गत तैतरीय शाखा में होती है। इनका गोत्र भारद्वाज, आपस्तंब और अवटंक कंभमपरिवारू था । श्री यज्ञनारायणजी दीक्षित ने अपने परिवार में सोमयज्ञों की परम्परा आरंभ की । उन्होंने ३२ सोमयज्ञ किये । उन्हें अग्निदेव ने प्रसन्न होकर वरदान दिया था कि सौ सोमयज्ञ पूर्ण होने पर उनके परिवार में भगवान् का प्राकट्य होगा । यज्ञनारायणजी के बाद उनके पुत्र गंगाधर भट्ट्ट ने २८, उनके पुत्र गणपति भट्ट्ट ने ३०, उनके पुत्र वल्लभ भट्ट्ट ने पाँच और उनके पुत्र लक्ष्मण भट्ट्ट ने पाँच सोमयज्ञ किये ।इस प्रकार लक्ष्मण भट्ट के समय १०० सोमयज्ञ पूर्ण होने पर उनके यहाँ पुत्र रूप में श्रीमद्वल्लभाचार्य का प्राकट्य हुआ ।

महाप्रभुजी श्रीमद्वल्लभाचार्य

श्री लक्ष्मणभट्टजी कांकरवाड़ से आकर काशी में बस गये थे । उनकी पत्नी इल्लम्मागारूजी थी । श्री लक्ष्मणभट्टजी अपनी सगर्भा पत्नी के साथ प्रवास पर थे तभी मध्यप्रदेश के रायपुर जिले के समीप राजिम तहसील के चम्पारण्य नामक स्थान पर श्री वल्लभाचार्यजी का प्राकट्य हुआ । यह शुभदिन वैशाख कृष्ण ११सं १५३५ ईस्वी सन् १४७८ का था । श्री वल्लभ बचपन से ही मेधावी थे । कम उम्र में ही उन्होंने शास्त्रों का गहन अध्ययन कर लिया । जब वे ११ वर्ष के ही थे तभी उनकें पिताश्री का गोलोकवास हो गया था ।

श्री वल्लभ ने तीन बार भारत भ्रमण किया और उस युग के दिग्गज पंडितों से शास्त्रार्थ किया । विजयनगर की विद्वत्सभा में आपने समस्त पंडितों से शास्त्रार्थ कर विजय प्राप्त की थी । वहाँ आपका वाचस्पति रूप प्रकट हुआ । आप दिग्विजयी हुए। विजयनगर के राजा ने आपका कनकाभिषेक किया तथा आचार्यों और विद्वानों की सर्वसम्मति से आपका 'अखण्ड भूमण्डलाचार्यवर्य जगद्गुरू श्रीमदाचार्य ' की उपाधि से विभूषित किया। इस प्रकार श्रीवल्लभाचार्य जी ने शास्त्रार्थ कर साकार ब्रह्मवाद की स्थापना की इसे शुद्धाद्वैत दर्शन के नाम से भी जाना जाता है । श्रीवल्लभाचार्यजी ने भगवान् श्रीकृष्ण की आज्ञा से जीवों को ब्रह्मसंबंध दीक्षा देना आरंभ किया और पूर्णपुरूषोत्तम रसस्वरूप श्रीकृष्ण की सेवा करने का मार्ग दिखाया । आपका यह मार्ग पुष्टिमार्ग या पुष्टिसम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध

है । आपने भगवद्कृपा को सर्वोपरि माना और प्रभु की भाव प्रधान सेवा प्रणाली स्थापित की आप भगवान् के वदनावतार , अग्निस्वरूप और साक्षात् श्रीकृष्ण रूप हैं । आपका 'महाप्रभुजी ' नाम प्रचलित है ।

श्री वल्लभाचार्यजी का विवाह काशी के देवनभट्ट की पुत्री महालक्ष्मीजी से हुआ था। आपके यहाँ प्रथम पुत्र श्री गोपीनाथजी का प्राकट्य संवत् १५६७ (ईस्वीसन् १५१०) आश्विन कृष्णा१२ को अड़ेल में हुआ । आपके द्वितीय पुत्र श्री विट्ठलनाथजी का प्राकट्य चरणाट में पौष कृष्णा ९ शुक्रवार संवत् १५७२ (ईस्वीसन् १५१५) के दिन हुआ था ।

श्रीमद्वल्लभाचार्यजी महान् दार्शनिक भगवद् प्रेरित धर्मसंस्थापक आचार्य ,क्रान्त दृष्टा मनीषी, उत्कृष्ट कलाप्रेमी और युग सृष्टा दिव्यविभूति थे । आप स्त्री, शूद्र और पतितों के उद्धारक थे ।

गुसांईजी श्री विट्ठलनाथजी

श्रीमद्वल्लभाचार्य के द्वितीय पुत्र श्री विट्ठलनाथजी का प्राकट्य विक्रम संवत् १५७२ (सन् १५१५ ई.) को पौष कृष्ण नवमी शुक्रवार को हुआ था । जब आप १५वर्ष के थे तभी आपके पिताश्री श्रीमद्वल्लभाचार्य महाप्रभुजी का लीला प्रवेश हो गया फिर भी आपने वेदवेदांग ,दर्शन ,पुराण , साहित्य और विविध कलाओं का गहन अध्ययन किया। आप एक प्रखर और ओजस्वी आचार्य थे , आप वल्लभ सम्प्रदाय में 'गुसांईजी 'के नाम से जाने जाते है ।

आपके अग्रज श्री गोपीनाथजी के लीला प्रवेश के पश्चात् आप वल्लभ सम्प्रदाय के आचार्य पद समाधीन हुए । आप बहुत उदार और क्षमाशील थे ।

आपने पुष्टिमार्ग के प्रचार के लिए गुजरात - सौराष्ट् की छः बार यात्रा की तथा सम्पूर्ण भारत के सुदूर के स्थलों की भी यात्राएँ की । गुसांईजी उच्चकोटि के दार्शनिक,विचारक और लेखक थे । तथा संस्कृत और ब्रजभाषा के उत्कृष्ट कवि भी थे । साथ ही आप एक अच्छे चित्रकार भी थे । गायन और वादन दोनों पर आपका असाधारण अधिकार था अतः आपको ' गीत संगीत सागर' के रूप में स्मरण किया जाता है । गुसांईजी उत्कृष्ट गायक और रससिद्ध कवि थे । आपने आठ वैष्णव महानुभावों को सम्मिलित कर 'अष्टछाप' की स्थापना की थी ।

गुसांईजी श्री विट्ठलनाथजी ने न केवल पुष्टिमार्ग अपितु भारतीय संस्कृति की अपूर्व सेवा की है । परकीय विधर्मी शासनकाल में राजशक्ति को आकर्षित किया और भयाक्रान्त हिन्दू जनता के भय को दूर किया । आपने अपने पिताश्री के द्वारा प्रवर्तित पुष्टिपथ का सुचिन्तन पूर्वक योजनावद्ध तरीके से व्यापक प्रचार किया । आपने पुष्टिमार्ग के व्यापक स्वरूप को प्रकट किया जिससे हरिजन, जैन और मुसलमान भी आपके सेवक बने ।

आपने पुष्टिमार्ग को व्यवस्थित रूप प्रदान किया । आपने भगवत्सेवा को ऐसा दिव्य,भावनात्मक और विराट स्वरूप प्रदान किया कि देश में भागवत क्रान्ति दिखलाई देने लगी।

गुसांईजी श्री विट्ठलनाथजी ने अपने सातों बालकों के माथे सात निधि स्वरूप पधराये। इनमें ज्येष्ठ पुत्र श्री गिरधरजी को श्री मथुराधीशजी पधराये गये । इन्हीं श्री गिरधरजी से प्रथम गृह या श्रीवल्लभ सम्प्रदाय का प्रथमपीठ माना जाता है । वर्तमान में श्री मथुराधीश प्रभु कोटा में विराजते हैं। ।

विक्रम संवत् १६४२ में माघ कृष्ण सप्तमी के दिन श्री गुसाईजी विट्ठलनाथजी लीला प्रवेश कर गये ।

प्रस्तुति - डा. गजानन शर्मा

प्रथमेश जी के पूर्वजों की यशोगाथा

श्री रवजी भाई प. पटेल

श्री गिरधरजी - प्रथम गृह के प्रथम तिलकायत

श्री गुसांईजी के जेष्ठ पुत्र श्री गिरधरजी का प्राकट्य संवत् १५६७ कार्तिक सुदी को अडेल में हुआ। श्री वल्लभ सम्प्रदाय के प्रथम पीठ या प्रथम गृह के आप प्रथम गृहाधिपति हैं ।

श्री गिरधरजी सर्वशास्त्र पारंगत थे । आप धीर - गंभीर स्वभाव वाले आचार्य थे। आप के वहूजी श्री भामिनी बहूजी भी अत्यन्त स्नेहमय एवं वात्सल्य युक्त थे ।

श्री गिरधरजी के घर तीन लालजी प्रकट हुए ।इनमें से प्रथम श्री मुरलीधरजी (प्रा.सं.१६३०) युवावस्था में ही नित्यलीला में पधार गये । द्वितीय पुत्र श्री दामोदर जी (प्रा. सं.१६३२) और तृतीय पुत्र श्री गोपीनाथजी (प्रा. सं.१६३४)के वंश द्वारा प्रथम गृह की परम्परा चल रही हैं ।

द्वितीय तिलकायत श्री गोपीनाथजी दीक्षित

श्री गोपीनाथजी का प्राकट्य सं.१६३४ माह वदी ६ (गुर्जर पोषवद ६) को हुआ। आप के अग्रज श्री दामोदरजी को श्री नाथजी एवं श्री नवनीतप्रियजी की सेवा प्राप्त हुई।इस प्रकार वे श्रीनाथजीके तिलकायतश्री वने ।श्री गोपीनाथजी को श्रीमथुरेशजी का स्वरूप प्राप्त हुआ । इस प्रकार आप प्रथम गृह की परम्परा के तिलकायत हुए । आप ने श्रीनाथजी के पास विराजते श्री मथुरेशजी को अलग अपने घर में पधराया ।

यज्ञों का अनुष्ठानकरने के कारण आपको दीक्षित कहा जाता है ।

तृतीय तिलकायत श्री वल्लभजी (श्री प्रभुजी)

श्री गोपीनाथजी दीक्षित के जेष्ठ पुत्र श्री वल्लभजी उपनाम श्री प्रभुजी का प्राकट्य सं. १६६० की पोष वदी ३ (गुर्जर मागसर वद ३) को हुआ । आप शास्त्रों के उच्चकोटि के ज्ञाता थे और अहर्निश भगवद् -सेवा में तत्पर रहते थे । आपश्री के समय में श्री मथुरेशजी तथा श्री द्वारकाधीशजी एक ही सिंहासन पर विराजते थे ।

चौथे तिलकायत श्री रणछोड़जी

श्री वल्लभजी (प्रभुजी)के लालजी श्री रणछोड़जी का प्राकट्य सं. १६७७ में जेष्ठ वदी ५ (गुर्जर वे.व. ५) को हुआ था । आपकी लोकिक कार्यो में रूचि नहीं थी । आपने अनेक ब्रज यात्राएँ की थी।आप एक महान् दाता थे । आप ने श्री गिरधरजी और श्री गोपीनाथ जी दीक्षितजी की पादुकाएँ सेवा में पधरायीं । आपने अपना स्थायी आवास श्रीमद्गोकुल में रखा था लेकिन बाद में यवनों के उपद्रवों के कारण बूँदी (राजस्थान) के राव राजा अनिरूद्धसिंहजी की विनती मानकर श्री मथुरेशजी को बूँदी पधाराया और बूँदी में निवास करने लगे ।

पाँचवे तिलकायत श्री गिरधरजी

श्री रणछोड़जी महाराज के लालजी श्री गिरधरजी का प्राकट्य चैत्र सुदी १० सं. १७२५ (कतिपय वंशावलियों के अनुसार १७२६/१७२७) को हुआ था । आपने अनेक दान दिये । आप अपरस सम्वन्धी सावधानी विशेष रखते थे । सेवा में भी आप बहुत तत्पर थे । बूँदी में विराजकर आपने श्री मथुरेशजी की सेवा खूब वैभव के साथ की ।

छटे तिलकायत श्री गोपीनाथजी

श्री गिरधरजी महाराज के लालजी श्री गोपीनाथजी का प्राकट्य बूँदी में भाद्रपद सुदी१४ सं.१७४५ (कतिपय वंशावलियों के अनुसार १७४७)में हुआ था । आपने बूँदी में विराजते हुए श्री मथुरेशजी की ६५वर्षों तक राग, भोग ,श्रृंगार - युक्त भावसंयुक्त सेवा की । बाद में कोटा नरेश राव राजा दुर्जनशालजी की विनती मानकर श्री मथुरेशजी को कोटा (नन्दग्राम) में पाटलपोल में स्थित हवेली में पधराया । आप का स्वरूप चमत्कारी था । आप नित्य चम्बल नदी के घाट पर स्नान ,सन्ध्या वन्दन के लिए पधारते थे मार्ग में

आप अनेक भक्तों के भय, संकट दूर करते थे । आपने कोटा में व्रज का स्वरूप प्रकट किया ।

सातवें तिलकायत श्री प्रभुजी

गोपीनाथजी के लालजी श्री प्रभुजी का प्राकट्य माह बदी २ (गुर्जर पोषवद २) संवत् १७६१ (कतिपय वंशावलियों में १७७१) को हुआ । आपने श्री मथुरेशजी के घर की सेवाप्रणाली वनायी । श्री मथुरेशजी के मन्दिर में अनेक नये भागों का निर्माण कराया। आप के समय में ही श्री व्रजेश्वरजी ठाकुरजी का मन्दिर बनवाया गया था । श्री व्रजेश्वरजी ठाकुरजी श्री गुसांईजी के द्वारा सुरत के साहूकार के बेटे की बहू के माथे पधराये गये थें। इस बहू का न्याय श्री गुसांईजी ने किया था । जिसका विवरण वार्ता साहित्य में मिलता है । आपने चम्वल नदी के तट पर श्री वल्लभ घाट बनवाया । वहां श्री मथुरेशजी एवं श्री व्रजेश्वरजी के पधराकर श्री यमुनापुलिन के भाव को खस के वंगले में शयन का मनोरथ किया था । इस प्रकार अनेक भक्तों को व्रज के दर्शन कराये थे । आप आशुकवि तथा उच्चकोटि के साहित्यकार थे । आपने अनेक पदों की रचना की है । आपने श्री मथुरेशजी के कई मनोरथों की प्रतिवर्ष की परम्परा बांधी ।

आठवें तिलकायत श्री गिरधरजी -

श्री प्रभुजी के लालजी श्री गिरधरजी (तृतीय) का प्राकट्य कोटा में पोष सुद १२ संवत् १७९२ में हुआ । श्री नाथद्वारा में तिलकायत श्री गोवर्धनेशजी महाराज ने १७९६ में श्री नाथजी के साथ सात स्वरूप पधारकर प्रथम सात स्वरूप उत्सव का मनोरथ किया। तव कोटा से श्री मथुराधीश प्रभु को श्री प्रभुजी महाराज ने श्रीजी द्वार पधाराया । उस समय वालक गिरधरजी भी साथ में पधारे थे । तभी मोहनगढ़ नाथद्वारा में श्री मथुरेशजी प्रभु का विशाल मन्दिर सिद्ध हुआ था । श्री मथुरेश प्रभु तीन वार नाथद्वारा पधारे और तीनों ही वार प्रभु इस मन्दिर में विराजे ।

नवें तिलकायत श्री गोविन्दजी महाराज

आप सातवें तिलकायत श्री प्रभु जी महाराज श्री के द्वितीय लालजी तथा अष्टम तिलकायत श्री गिरधरजी के छोटे भाई थे । श्री गिरधरजी (तृतीय) के घर किसी वालक का प्राकट्य न होने से गोविन्दजी महाराज श्री मथुरेशजी के घर के नवें तिलकायत हुए । आपका प्राकट्य कार्तिक वदी ३ सं. १७९७ के दिन हुआ था । आपके समय में श्री मथुरेश प्रभु ने विचित्र लीलाएँ करके आपकी परीक्षा की और सेवा में दृढ़ता प्रदान की । आपको श्री मथुरेश प्रभु का विशेष सानुभव था ।

आपके समय में श्रावण वदी १(गुर्जर अषाड़ वद १) के दिन शीशम के नये हिंडोले में श्री मथुराधीश प्रभु झूल रहे थे तब एक कीर्तन के समाप्त होते ही अचानक हिंडोला टूट गया । उसी समय आपने दौड़कर श्री मथुराधीश प्रभु को गोद में ले लिया । तब आपने प्रभु को विविध सामग्री आरोगायी । तभी से श्रावण वदी ११(गुर्जर अषाड़वद ११)के दिन श्री मथुराधीशजी को हिंडोले में झुलाना आरंभ हुआ । आपने आज्ञा की कि तीज तक प्रभु हिंडोला झूलेंगे । यह प्रणाली आज तक चालू है । आपको अनेक बार श्री मथुरेश प्रभु ने सेवा की त्रुटियाँ दूर करवाने की आज्ञा स्वप्न में की । आपने तदनुसार व्यवस्थाएँ की । आप नित्य सजातीय ब्राह्मणों को भोजन करवाते थे ।

आपके यहाँ तीन लालजी का प्राकट्य हुआ किन्तु तीनों ही बाल्यावस्था में लीला पधार गये । तब आपने छठे तिलकायत श्री गोपीनाथजी के द्वितीय पुत्र श्री मथुरामल्लजी के प्रपौत्र श्री गोकुलनाथजी के पौत्र एवं श्री विट्ठलनाथजी के पुत्र श्री वल्लभजी को गोद लिया और उनका नाम प्रभुजी रखा । ये दसवें तिलकायत हुए ।

दसवें तिलकायत श्री प्रभुजी (श्री वल्लभजी)

आपका प्राकट्य कार्तिक सुदी १४ संवत् १८३७ को हुआ । किसी वंशावली में आपका प्राकट्य १८४८में और किसी में १८६० में बताया गया है लेकिन यह उल्लेख मिलता है कि आप १८५८ में मथुरेशजी के तिलकायत पद पर आये थे । अतः सं. १८६० में प्राकट्य संभव नहीं है ।

श्रीनाथजी के तिलकायत श्री छोटे दाऊजी महाराज ने सं.१८७८में श्रीजी के सात स्वरूप पधराकर मनोरथ किया तब श्री गोविन्द जी महाराज ने श्री मथुरेशजी को श्री ज़ी द्वार पधराया था । उस समय प्रभुजी महाराज भी साथ में पधारे थे । उस अवसर पर श्री मथुरेशजी के साथ चार स्वरूपों का उत्सव श्रीजी द्वार में मोहनगढ़ में श्री मथुरेशजी के मन्दिर में सम्पन्न हुआ था ।

आप के घर भी किसी बालक का प्राकट्य न होने के कारण आपके लीला प्रवेश के बाद आपके बहूजी श्री प्रभावती जी ने सेवा का क्रम चलाया । इस अवधि में मन्दिर पर बहुत कर्ज हो गया था । उस समय श्री मथुरेश प्रभु ने चमत्कार दिखाया । श्री बहूजी महाराज द्वारा लेनदारों के दिये गये बीड़े द्वारा कर्ज चुकता करवा दिया ।

आपके नित्य लीला प्रवेश के बाद श्री प्रभावती बहूजी महाराज ने श्री विट्ठलनाथजी (कनैयालालजी) को गोद लिया ।

ग्यारहवें तिलकायत श्री कनैयालालजी

आप मथुरेशजी के घर के चौथे तिलकायत श्री रणछोड़जी के वंश के श्री जीवनजी के पुत्र श्री विट्ठलेशजी के पुत्र श्री वल्लभजी के पुत्र थे ।आपका प्राकट्य सं. १८७८ के श्रावण सुदी २ के दिन हुआ था । आपका प्रथम नाम श्री विट्ठलेशजी था । श्री मथुरेशजी के तिलकायत पद पर तिलक होने पर आपने श्री कनैयालालजी नाम धारण किया ।

वैष्णव आपको श्री मथुरेशजी का बोलता -चालता बालक स्वरूप मानते थे । आपने श्री प्रभु के सुखार्थ सेवा का खूब विस्तार किया । फागुन -श्रावण मास में बगीचे के मनोरथ आरंभ किये।

कोटा की भीषण गर्मी को देखते हुए आपने रोहिणी नक्षत्र में श्री मथुरेश प्रभु की पूरी पीठिका पर चन्दन का विशेष लेप आरंभ किया आप उच्चकोटि के विद्वान तथा सेवापरायण आचार्य थे । आपको जब धनसंग्रह दिखलाई दिया तो आपने अपने पुत्र रणछोड़लालजी की सम्मति से श्री मथुरेशजी के छप्पन भोग का मनोरथ किया ।

सं. १९४३ के चैत्र सुदी १३ के दिन कोटा के पास किशोरपुर में चम्बल नदी (चर्मणवती) के घाट के पास सुन्दर भूमि में श्री जी का नवीन मन्दिर सिद्ध करवा कर बहुत धूमधाम से उसमें श्री मथुरेश प्रभु तथा श्री व्रजेश्वरजी को पधराया ।

१५० भीतरिया और ३००परिचारकों ने मिलकर १० दिन निरन्तर प्रयास कर सामग्री सिद्ध की । उस छप्पन भोग की सामग्री प्रभु को अंगीकार करवायी गयी थी । उसके बाद से किशोरपुरा की यह पवित्र भूमि छप्पन भोग स्थल के नाम से आज पर्यन्त जानी जाती है ।

बारहवें तिलकायत श्री रणछोड़लाल जी

आपका प्राकट्य श्री कनैयालालजी (श्री विट्ठलनाथजी) के घर पोष सुदी ७सं. १९०८ के दिन कोटा में हुआ था । आप श्यामस्वरूप ,देदीप्यमान और चमत्कृत स्वरूप थे । आप श्री मथुराधीश प्रभु की शंखनाद से शयनपर्यन्त की पूरी सेवा स्वयं करते थे । जलधारा के पात्र भी स्वयं माँजते थे । आपने अपने पितृचरण के साथ सं. १९४३ में कोटा में किशोरपुरा के पास श्री मथुरेश प्रभु को छप्पन- भोग आरोगाया था ।

आपके उत्तर अवस्था में गलग्रंथी का भयानक रोग हो गया था। लेकिन आपने सेवा ,जप ,पाठ आदि नहीं छोड़े थे ।

आपको यहाँ सं. १९३७ में कार्तिक सुदी १४ के दिन श्री जीवनलालजी का प्राकट्य हुआ । विवाह के बाद युवावस्था में ही वे लीला में पधार गये । इसी प्रकार सं. १९४०

में दो बालकों (जुड़वा) का प्राकट्य हुआ किन्तु ये भी छोटी उम्र में लीला में पधार गये। जीवनलाल जी की बहूजी ने बम्बई मोरामन्दिरवाला श्री गोकुलनाथजी के द्वितीय लालजी श्री दीक्षितजी को गोद लिया और उन्हें किशनगढ़ का मन्दिर प्राप्त हुआ । उन्हीं दीक्षितजी महाराज के लालजी विद्वद् प्रवर श्री श्यामसनोहरजी महोदय है । सं. १६६५ में श्री रणछोड़लालजी महाराज की इच्छा हुई कि श्री मथुराधीश प्रभु को श्रीजी द्वार तथा व्रज में पधराकर विविध मनोरथ करने की इच्छा हुई ।तब प्रथम तो कोटा नरेश ने श्री प्रभु को पधराने की अनुमति नहीं दी किन्तु श्री रणछोड़लालजी की विशेष आज्ञा का सम्मान करते हुए आपने दीनभाव से विनती की कि प्रभु को शीघ्र ही वापस कोटा पधरा लाने की कृपा करें , तब आपने आज्ञा की कि श्री प्रभु तो कोटा पधारेंगे किन्तु हम नहीं आएँगे । उस समय तक कोटा नरेश को सन्तान नहीं थी। आपने तब उन्हें सन्तान प्राप्ति का आशीर्वाद दिया ।

श्री मथुराधीश प्रभु को रथ पर आरूढ़ करवा कर रणछोड़लालजी महाराज ने सं. १६६५ को विजयादशमी के दिन व्रज की ओर प्रस्थान किया । कोटा, से बूँदी, श्री जी द्वार ,कांकरोली,

किशनगढ़ होते हुए ठाकुरजी को व्रज में पधराया और १४ मास तक ब्रज में विभिन्न स्थानों पर ठाकुरजी के विविध मनोरथ करने के वाद श्री रणछोड़लालजी श्रावणवद अमावस सं. १६६५ को जतीपुरा में नित्य लीला में पधार गये ।

श्री गिरिराजजी की निकुंज में पधारने के लिए ही श्री रणछोड़लालजी महाराज मानो कोटा से श्री गिरिराजजी पधारे थे । कोटा से व्रज पधारते समय आपने कोटा नरेश श्री उमेदसिंहजी को पुत्र प्राप्ति का आशिर्वाद दिया था । जिस दिन श्री रणछोड़लालजी लीला में पधारे उसी दिन कोटा नरेश के घर पुत्र जन्म हुआ । महाराव भीमसिंहजी उसी आशीर्वाद के रूप में हैं ।

श्री रणछोड़लालजी महाराज के नित्यलीला प्रवेश के बाद श्री मथुराधीशजी आसोज वदी १०सं. १६६५ के दिन कोटा पधारे । श्री रणछोड़लालजी महाराज ने अपने पितृचरण के नाम से कोटा में श्री विठ्ठलनाथ संस्कृत पाठशाला की स्थापना की ।

तेरहवें तिलकायत श्री गिरिधरजी (श्री द्वारकेशलालजी)

श्री रणछोड़लालजी महाराज के नित्यलीला प्रवेश के वाद सं. १६७६ को वैसाख वदी ६ के दिन श्री रणछोड़लालजी महाराज श्री की वहूजी ने द्वारकेशलालजी को गोद लिया और श्री मथुरेशजी के घर के तिलकायत के रूप में तिलक किया । आप प्रथम घर के तिलकायत श्री वड़े गिरधरजी महाराज के द्वितीय पुत्र श्री दामोदरजी महाराज के वंश में प्रकटे थे । आपके पिता श्री वल्लभलालजी महाराज अमरेली के घर के कहलाते थे ।

उनका मन्दिर बम्बई में भूतेश्वर में दाऊजी की गली में है । आपका प्राकट्य सं. १८४४को जेठ सुदी ६के दिन हुआ था । आपका पूर्व नाम द्वारकेशलालजी था । और गोद आने पर आपका नाम श्री गिरधरजी हुआ ।

आप सर्व शास्त्र मर्मज्ञ ,अत्यन्त सेवारसिक , आयुर्वेद के परम ज्ञाता और कुशल व्यवस्थापक थे । । कोटा की गादी पर विराजने के बाद आपने अपनी सारी सम्पत्ति श्री प्रभु की सेवा में विनियोग कर दी और विविध मनोरथों से प्रभु को रिझाया ।

आप अपरस, मेंड की प्रचीन परम्परा के पूर्ण आग्रही थे । आप नित्य १०८ गागर से स्नान करके अपरस करते थे । अपरस के बिना जलपान तक नहीं करते थे ।

श्री महाप्रभु और श्रीनाथजी का गिरराजजी पर जिस शिला पर प्रथम मिलन हुआ था और उभय स्वरूप आनन्द से द्रवीभूत हो गये थे । उस समय उभय स्वरूपों के चरणारविन्द उस शिला पर अंकित हो गये थे । उस शिला को आपने विशेष मनोरथपूर्वक अपने निवास स्थान में पथराया । यह शिला आज भी वहाँ विराजती है ।

जिस प्रकार आप सेवारसिक और मेंड- मर्यादा के आग्रही थे उसी प्रकार आप वैदिक मर्यादा का भी सुचारू पालन करते थे । आप नित्य विधिपूर्वक संथ्या वन्दन करते थे । आपने अनेक जीवों के रोग संथ्या के जल के द्वारा दूर किये थे ।

आप सभी कलाओं के पोषक थे और आपने अनेक उत्तम कलासेवियों की श्री की सेवा में लगाया था । आप के प्रताप से श्री चन्दनजी चतुर्वेदी प्रसिद्ध गायक बने । प्रसिद्ध चित्रकार श्रीदामोदरदासजी को भी बचपन में प्रश्रय देकर पारंगत बनाया । बाद इन्हीं चित्रकार दामोदरदासजी ने कांकरोलीवाले श्री व्रजभूषणलालजी महाराज श्री के आश्रय में रहकर उनकी प्रेरणा से सर्वोत्तम स्त्रोत्र के नामानुरूप श्री महाप्रभुजी के १०८ लीला चित्र सिद्ध किये थे ।

आप के मुख्य सेवकों में श्री विठ्ठलेश संस्कृत पाठशाला के प्रधानाध्यापक श्री गोकुलदासजी संस्कृत के प्रकांड पंडित होने के साथ ही सेवारसिक भी वने और श्री मथुरेशजी के वड़े मुखियाजी के रूप में आजीवन सेवा करते रहे ।

आपकी श्री - - - के विशेष श्रृंगार सिद्ध करवा कर ,धारण करवाने में अत्यन्त रूचि थी । इसी कारण राजकोट की प्रसिद्ध सुवर्ण शाला के शिक्षक श्री गगुभाई सोनी को अपने यहाँ बुलाकर, लम्वे समय तक रख कर अपनी स्वयं की देखरेख में और प्रेरणा से जतीपुरा में विराजते निज सेव्य स्वरूपों के लिए प्राचीन नमूने के जिस प्रकार के आभूषण श्री गुसाईजी, श्रीगोकुलनाथजी ने सिद्ध करवाये थे वैसे ही आभूषण सिद्ध करवायें ।आपके ही अनुग्रह से गगुभाई सोनी के भगवद्भाव का पोषण हुआ और वे सम्प्रदाय में आकरण निर्माण द्वारा अनेक गोस्वामी वालकों और भगवदीयों के कृपापात्र भगवदीय वने ।

सम्प्रदाय के वहुश्रुत विद्वान् श्री वलदेव शर्मा ' सत्य ' , जिन्होंने अनेक -विध काव्यों

की रचना की है ,भी आप के संग से साहित्यानुरागी बने ।

आपश्री ने एक वर्ष तक श्रीनाथद्वारा में विराजकर सभी उत्सवों की सेवा की । सं. १६६६ को मार्गशीर्ष सुदी १ को श्रीजी के साथ श्री नवनीतप्रियाजी , श्री विट्ठलनाथजी को पधारकर छप्पन भोग का मनोरथ किया ।

आपश्री के यहाँ तीन बेटीजी और दो लालजी का प्राकट्य हुआ । प्रथम लालजी वालवय में ही लीला में पधार गये । द्वितीय लालजी श्री रणछोडलालजी प्रथमेश का प्राकट्य वैसाख वदी ५ सं. १६८८तदनुसार ७मई १६३१ को हुआ ।

आप २३ अक्टोवर १६४५ को नित्यलीला में पधारे । लीलाप्रवेश के दिन भी आपने स्नान करके श्री मथुरेशजी के चरणस्पर्श किये और लीला में प्रवेश किया ।

सार्थक पुर्नजन्म भी सौभाग्य

मुझे दु:ख है कि शायद इस जीवन में कदाचित् मेरा कार्य पूर्ण न हो, और इसके लिए पुन: श्रम करना पड़े फिर भी इससे यदि महाप्रभुजी का कार्य सिद्ध हो तो इसे मैं अपना सौभाग्य ही मानूंगा.

— प्रथमेश

चौदहवें तिलकायत श्री रणछोडाचार्य जी 'प्रथमेश'

लेखक : श्री रघुनाथ प्रसाद कटारा
अधिकारी मंदिर श्री बड़े मथुरेशजी, कोटा

प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद आचार्यवर श्री प्रथम पीठाधीश्वर गोस्वामि श्री रणछोड़ लाल जी महाराज के जीवन चरित्र के कुछ अंश जो मेरी स्मृति में हैं उन्हें अपनी मति अनुसार लिखकर श्री चरणों में समर्पित कर रहा हूँ :-

"जन्म से पूर्व का चमत्कार "

जतीपुरा जिला मथुरा (उत्तर प्रदेश) स्थित "गिरधर निवास " में आप श्री के प्राकट्य से पूर्व ही जेठ बदी पंचमी संवत् उन्नीस सो अट्ठासी के दिन प्रातः आपश्री के पिताश्री गोस्वामी श्रीद्वारिकेश लाल जी महाराज श्री ने एक छोटे बालक का चरण चिन्ह मंदिर के चौक में देख कर आज्ञा की कि " आज हमारे घर में किसी चमत्कारी वालक का प्राकट्य होने वाला है "

शुभ मिती ज्येष्ठ कृष्णा ५ संवत् १९८८ तदनुसार दिनांक ७मई १९३१ के शुभ दिन आपश्री का प्राकट्य श्री गिरिराज जी कि तरहटी में स्थित ग्राम जतीपुरा में गिरधर निवास के जापा कोठा में हुआ ।

बाल्य काल शिक्षा -दिक्षा

आपश्री का बाल्य काल जतीपुरा (उ .प्र.) व कोटा (राजस्थान) में ही अधिक वीता । आपके पूज्य पिता श्री ने आप के अध्ययन हेतु जतीपुरा में ग्राम आन्यौर(मथुरा) के पंडित श्री पुरूषोत्तम जी शास्त्री को रखा । कोटा में मुख्य रूप से श्री गोकुलदास जी आपश्री को सस्कृत व स्वमार्गीय ग्रंथों की शिक्षा दी व सेवा शृंगार सिखाया । साथ ही अन्य विद्वानों जैसे श्री भ्रमर लाल जी शास्त्री, पंडित चक्रधर जी शास्त्री , न्यायाचार्य जी से भी आप ने धर्मग्रंथों का अध्ययन किया ।

सेवा - शृंगार : मुखिया गोकुलदास जी व अपने पूज्य पिताश्री से सीखा । पिताश्री आचार विचार , सेवा श्रृंगार में पूर्ण पारंगत थे । अतः आप श्री ने श्रृंगार व सेवा की पूर्ण विधि अपने पिता श्री से प्राप्त की । साथ ही आप श्री ने शास्त्रीय संगीत का अध्ययन भी भली भांति किया। आप श्री-तवला ,पखावज , हारमोनियम , वीणा ,सारंगी , वांसुरी, वायलिन , वेला आदि सभी वाद्य यंत्र वजाने में प्रवीण थे । आप श्री को हवेली संगीत, कीर्तन साहित्य का पूर्ण ज्ञान था , तथा आपश्री श्री - - - - - - - - - - जी के सम्मुख कीर्तन करते व वाद्य भी वजाते थे ।

पाक कला में भी आपश्री वड़े प्रवीण थे । श्री - - - - - जी को नित्य भोग में नई

-नई सामग्रियों को आरोगाने का बड़ा शौक था ।

आपश्री ने किसी भी पाठशाला व विद्यालय में प्रवेश नहीं लिया था । सम्पूर्ण शिक्षा घर पर ही प्राप्त की थी । घर पर ही धर्मशास्त्र , संगीत शास्त्र , एवं औषधि ज्ञान में आयुर्वेदिक , ऐलोपैथी , होम्योपैथी आदि की शिक्षा ग्रहण की थी । आप श्री को अध्ययन का बहुत व्यसन था । आप एक बार जिस चीज को पढ़ लेते थे वह उन्हें हमेशा के लिये याद हो जाती थी । उनकी ऐसी कुशाग्र बुद्धि थी । आप श्री ने हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत , गुजराती , मराठी, बंगाली आदि भाषाओं का गहन अध्ययन कर ज्ञान प्राप्त किया था ।

आप श्री को मोटर ड्राइविंग व घुडसवारी का भी बहुत शौक था ।

यज्ञोपवीत :- आपश्री का यज्ञोपवीत संस्कार संवत् १६६६ में कोटा में सम्पन्न हुआ था । उस समय आपश्री की उम्र ११ वर्ष की थी । उसके बाद ही अपने पूज्य पिताश्री के साथ नाथद्वारा पधारे और वहाँ पिता श्री के साथ छैः माह रह कर श्रीनाथ जी की सेवा की । उदयपुर के महाराणा श्री भूपाल सिंह जी ने आप श्री के पूज्य पिता श्री व आपश्री को अपने महल में पधराया और पधरावनी की थी । उस समय का चित्र आज भी कोटा मंदिर में है ।

आपश्री की अवस्था जब मात्र १४ वर्ष की थी कि पूज्य पिता श्री गोस्वामी द्वारिकेशलाल जीमहाराज २३ अक्टूबर १६४५ को कोटा में लीला में पधार गये । अल्पायु में विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा । इतनी छोटी अवस्था तथा सम्पूर्ण भारत में श्री मंदिर, जायदाद को सँभालने का भार आ पड़ा ।इस सब के लिए आप श्री को संघर्ष करना पड़ा।

पूज्य पिता श्री की स्मृति में आप श्री ने सन् १६४६ में व्रज चोरासी कोस की यात्रा की थी ।

पाणिग्रहण संस्कार :- आप श्री का शुभ विवाह ३ जुलाई १६४८ तदनुसार आषाढ़ वदी ११ शनिवार सम्वत् २००५ को मद्रास निवासी श्री एस. एल. नरसैया जी की सुपुत्री सौ.का.चि. भाग्यलक्ष्मी के साथ सम्पन्न हुआ । विवाह होने के पश्चात श्रीमति वहूजी को इस घर का नाम " महालक्ष्मी वहूजी " दिया गया ।

आपश्री के वहूजी के आठमासे "सीमन्त" का प्रस्ताव वैसाख शुक्ल ७ चन्द्रवार संम्वत् २००७ तदनुसार २४-४-५० को हुआ और प्रथम संतान के रूप में वेटीजी का जन्म हुआ । जिन्हें "लीना वेटी जी के नाम से जाना जाने लगा ।

आपश्री को सन् १६५२ में द्वितीय सन्तान के रूप में पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई जिन्हें आपश्री ने वावा लालमणीजी नाम दिया ।

आप श्री को तृतीय सन्तान के रूप में पुनः लक्ष्मी रूपेण कन्या की प्राप्ति हुई जिन्हैं छोटे वेटी जी मीतू राजा के नाम से जाना जाने लगा ।

बड़ी बेटी जी लीना बेटी जी तथा बावा श्री लालमणी जी का विवाह प्रस्ताव जतीपुरा में ही करवाया -छोटे बेटीजी मीतू राजा बेटी जी का विवाह प्रस्ताव कलकत्ता में करवाया।

संगठन :- आप श्री को सम्प्रदाय का प्रचार -प्रसार करने की व वैष्णव जगत को संगठित करने की बड़ी लालसा रहती थी इसी संदर्भ में आप श्री ने सन् १९५० में बम्बई में अखिल भारतीय शुद्धाद्वैत वैष्णव संघ की स्थापना की -जिसकी सभा प्रति रविवार को सातस्वरूप की हवेली, बम्बईमें होती थी जिसमें गोस्वामी बालकों व सम्प्रदाय के विद्वानों के प्रवचन होते थे । बम्बई निवासी वैष्णवों की गणना का कार्य भी उसी समय कराया था उपर्युक्त संस्था के अंतर्गत एक आयुर्वेदिक विद्यालय भी प्रारंभ कराया था ।

परिषद संगठन :- पुष्टिमार्गीय वैष्णवों के संगठित करने के लिये आपश्री ने संपूर्ण भारत में घूम-घूम कर प्रचार किया और सन् १९०६ में स्थापित वैष्णव परिषद् को सन् १९५६ में अखिल भारतीय स्वरूप प्रदान किया जिसका अधिवेशन बड़ौदा "गुजरात "में बड़ी धूमधाम से हुआ। जगह -जगह परिषद की शाखायें स्थापित कीं । आपश्री को परिषद् को बढ़ाने की इतनी चिन्ता रहती थी कि आप श्री ब्रह्मसम्बन्ध की दीक्षा भी देते थे जब वह परिषद का सदस्य बनें । आप श्री के प्रयत्नों से अखिल भारतीय पुष्टि मार्गीय वैष्णव को अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप दिया जा सका ।

परिषद् के अन्तर्गत बम्बई , भावनगर , उज्जैन आदि में बाल मंदिर प्रारम्भ कराये। महिलाओं के लिये वनिता विकास वीथी प्रारंभ की । बम्बई के झोपड़ पट्टी क्षेत्र में आप श्री परिषद् के स्वयं सेवकों के साथ स्वयं पधारते व गरीबों में दवाइयाँ ,वस्त्रादि वितरण करते थे ।

आदिवासी क्षेत्रों में विधर्मियों के धर्म परिवर्तन करने के प्रयास को देखकर मध्य प्रदेश के आदिवासी क्षेत्र झाबुआ में स्वयं पधार कर जंगलों में रह रहे वन वासियों के हृदयों में हिन्दू धर्म के प्रति आस्था बनाये रखने के प्रयास किये तथा वहां अन्न -वस्त्र औषधि वितरण का कार्य किया और झाबुआ में आदि वासियों के बच्चों के लिये श्री वल्लभ विद्या निकेतन बाल मंदिर प्रारंभ किया यह संस्था आज भी व्यवस्थित रूप से संचालित भवन हो रही है । जमीन लेकर भवन निर्माण भी करया ।

मथुरा जिले में औरंगाबाद का हाई स्कूल भी परिषद् में लिया जो आज भी चल रहा है परिषद् के क्षेत्रिय सम्मेलन अलग-अलग राज्यों में विभिन्न स्थानों पर करके परिषद् की सदस्यता को बढ़ाया । बालकों में पुष्टिमार्ग के सिद्धान्तों को दृढ करने हेतु आपश्री ने बाल संस्कार शिविरों का कार्यक्रम प्रारंभ किया ।

परिषद् के प्रचारार्थ आप श्री ने सौराष्ट्र में तथा जतीपुरा से ग्वालियर तक पद यात्रा की ।

कुंभ पर्व व सोम यज्ञ :-

भारत वर्ष में हरिद्वार, प्रयागराज,उज्जैन व नासिक में कुम्भ मेला हजारों वर्षों से लगता आ रहा है जिसमें हिन्दू धर्म के धर्माचार्य सन्त,महन्त एकत्रित होते हैं । किन्तु पुष्टि मार्ग के कोई आचार्य कुंभ पर्व में भाग नहीं लेते थे । अतः महाराजश्री प्रथम बार उज्जैन के सिंहस्थ कुंभ पर्व में अपना कैम्प "श्री वल्लभाचार्य नगर " के नाम से लगाया और विष्णु स्वामी सम्प्रदाय के आचार्य की हैसियत से कुंभ पर्व स्नान किया तथा कुंभ के समय ही उज्जैन में सोमयज्ञ की परम्परा को पुनर्जीवित किया । उज्जैन से कुंभ पर्व और सोम यज्ञ प्रारंभ करके चारों कुंभ " उज्जैन, हरिद्वार, प्रयागराज व नासिक "तथा उज्जैन, राजकोट,वम्बई, प्रयागराज में दो जगन्नाथपुरी में,कोटा, कलकत्ता, सूरत में, कुल नौ सोमयज्ञ किये ।

पंचशताब्दी :-

श्रीमद्वल्लभाचार्यजी की पंचशती का कार्यक्रम पूरे भारत में आयोजित किया गया। बम्बई व कोटा में विशेषरूप से कार्यक्रम हुए जो चिरस्मरणीय हैं । भारत सरकार ने भी श्रीमद्वल्लभाचार्य का डाक टिकिट जारी किया । कोटा में पाटनपोल से रिपटा जाने वाली सड़क का नाम श्री वल्लभाचार्य मार्ग नगर परिषद ने रखा ।

७नवम्बर १९६६ को दिल्ली में हुए ऐतिहासिक गोवध विरोधी सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लिया और पुलिस की लाठी भी खाई ।

आप सभी सम्प्रदायों के धर्माचार्यों व सन्त महन्तों का आदर करते थे और उनके साथ हिन्दू धर्म पर होने वाले अत्याचारों के विकास के विषय में सदैव चर्चा किया करते थे । जगत्गुरू शंकराचार्य श्री निरंजन देव जी तीर्थ से उनके निकट के संबंध थे । ब्रह्मलीन श्री करपात्री जी , ब्रह्मचारी श्री लक्ष्मण चैतन्य से भी आपके अच्छे सम्बन्ध थे । प्रयाग कुंभ पर्व के अवसर की घटना मुझे भली भांति याद है कि श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी ने आपश्री को अपने आश्रम में आमंत्रित किया । लेखक आपश्री के साथ था । महाराजश्री आश्रम में पधारे और श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी ने आप श्री को उच्च आसन पर विराजमान कराया । आप श्री के चरण धोये । माल्यार्पण किया व चन्दन लगाया । फिर फल भेंट किये । वहाँ अपने आश्रम को घुमा फिराकर दिखाया । बिदाई के समय बहुत सी पुस्तकें भेंट कीं ।

हरिद्वार में १९७४ में कुंभ पर्व पर सलेमावाद "राज."आचार्य श्री जी महाराज ने अपने कैम्प में आमंत्रित किया और आपश्री ने वहाँ पधार कर प्रवचन किये । श्री जी महाराज अति प्रसन्न हुए ।

विश्व हिन्दू परिषद के आपश्री मार्ग दर्शक मंडल के सदस्य थे ।

आपश्री ने रतलाम, अजमेर, कोटा आदि के कई सम्मेलनों में भाग लिया व प्रवचन भी किये । उदयपुर के महाराणा भगवत्सिंहजी आपश्री का वड़ा आदर करते थे । अजमेर

सम्मेलन में राजमाता विजयाराजे सिंधिया नेआपको बड़ा आदर सम्मान दिया था । कलकत्ता में आपश्री ने रामशिला पूजन का कार्य अक्टू.१९८९ को सम्पन्न किया था । और लाखों की भीड़ को सम्बोधित किया ।

जीवन संघर्ष -:

छोटी अवस्था में पूज्य पिताश्री का साया उठ जाने से आपको कड़ा संघर्ष करना पड़ा अनेक बाधाएं आई । किन्तु दृढ़ निश्चय और आत्म बल के कारण सारी बाधाएँ दूर हुई ।

आपश्री के पूज्य पिता श्री का मनोरथ था कि श्री मथुराधीश प्रभु को ब्रज- में पधराकर मनोरथ किये जावें किन्तु उनके जीवनकाल में यह मनोरथ पूर्ण न हो सका किन्तु आपश्री के मन में यह इच्छा थी कि मनोरथ पूर्ण होना चाहिए । तभी ऐसा हुआ कि भारत स्वतंत्रता के पश्चात् राजपूताना की रियासतों को मिलाकर राजस्थान बना और राजस्थान सरकार ने मंदिरों एवं धर्म में हस्तक्षेप प्रारंभ कर दिया । इन सब कारणों से और प्रभु की इच्छा जानकर आपश्री दिनांक १२जून १९५३ को मथुराधीश प्रभु को कोटा "राज"से जतीपुरा ब्रजभूमि में पधरा ले गये । इस कारण आपश्री के विरूद्ध राजस्थान सरकार द्वारा चोरी का वाद" मुकदमा " लगाया गया तथा आपश्री के गिरफ्तारी के वारंट निकले । आपश्री की जमानत बम्बई में हुई । आपश्री ने राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर बेंच में याचिका लगाई और चोरी का वाद "मुकदमा "निरस्त हुआ तत्काल ही राजस्थान के एडवोकेट जनरल ने सन् १९५५ में दीवानी का दावा दायर किया । इसके पश्चात् कोटा की धार्मिक जनता की भावनाओं से द्रवित होकर आपश्री ने श्री मधुराधीश प्रभु को दिनांक १६ अप्रैल सन् १९७५ को ब्रजभूमि से वापिस कोटा (राज०) में पधराया । आप्तोर्याम सोमयज्ञ : - आपश्री ने सन् १९८४ के अप्रेल माह में छप्पन भोग स्थल कोटा में वैदिक आप्तोमार्याम सोमयज्ञ करवाया जिसमें भारत वर्ष के अनेक दूर - दूर के प्रान्तों वैष्णवजन आकर शामिल हुए तथा यज्ञ का दर्शन एवं वेद मन्त्रोचारण श्रवण का लाभ लिया ।

छप्पनभोग कोटा :-

सम्वत् १९४३ में आपश्री के पितामह ने श्री मथुराधीश प्रभु को किशोरपुरा में छप्पन भोग का बड़ा मनोरथ कराया था तो आप श्री ने इस छप्पन भोग के मनोरथ के एक सौ वर्ष पूर्ण होने पर श्री मथुराधीश प्रभु को उसी स्थान पर उस प्रकार का ही छप्पन भोग का मनोरथ करने की आज्ञा की और एक सौ वर्ष बाद श्रीमथुराधीशजी को किशोरपुरा, कोटा स्थित छप्पन भोग स्थल पर पधराया और दिनांक २ मार्च १९८६ तदनुसार फाल्गुन शुक्ल सप्तमी सम्वत् २०४२ को छप्पन भोग का बड़ा मनोरथ किया । जिसमें कई गोस्वामी बालक पधारे थे तथा श्रीनाथजी "नाथद्वारा " के मुखिया श्री गंगादास जी व श्री नवनीत प्रिय जी के मुखियाजी भी इस छप्पन भोग में शामिल हुए थे । इस छप्पन भोग में १०१ बोरी खांड "श र" तथा तीन सौ दो देशी घी के पीपे गुड़, वेसन, मैदा आदि सामग्री बहुत

तादाद में विनियोग हुई । दूध घर की सेवा करने नाथद्वारा के साग घरिया श्री गोपाल दास जी आये थे । इस छप्पन भोग की सामग्री सिद्ध कराने व छप्पन भोग सजाने का सारा भार श्री नाथूलाल जी साचौरा के सुपुर्द किया था ।

श्रीजी को छप्पन भोग में पधराना :-

सम्वत् १९४३ के छप्पन भोग में मंदिर से छप्पन भोग स्थल तक श्री मथुराधीश प्रभु जिस सिगराम "रथ" में पधारे थे तथा इस २०४२ के छप्पवन भोग में श्रीमथुराधीश जी को उसी सिगराम में महाराज श्री ने छप्पनभोग स्थल तक पधराया । इस अवसर पर कोटा दरबार महाराव भीमसिंह जी मंदिर से गढ़ तक महाराज श्री के साथ ही पधारे थे तथा गढ़ के मुख्य द्वार के सम्मुख कोटा दरबार ने आपश्री का पुष्पहार पहना कर स्वागत किया । सिगराम को दो बैलों के द्वारा खींचा जा रहा था । साथ में कोटा व अन्य दूर-दूर स्थानों से आये हुए वैष्णव बहुत बड़ी तादाद में थे । छप्पन भोग स्थल पर श्रीमथुराधीश जी चार रोज तक बिराजे तथा आपश्री द्वारा नित्य नये मनोरथ कराये गये। छप्पन भोग के दर्शन हेतु लाखों की तादाद में दर्शनार्थी आये थे । यहाँ पर बाहर से आये हुए वैष्णवों के आवास एवं प्रसाद की व्यवस्था अत्यन्त सराहनीय थी । इसमें कोटा नगर के वैष्णवों ने रात दिन अथक परिश्रम किया था ।

सन् १९५८ में वम्बई म्युनिसिपैलिटी ने आप श्री के निवास को गिरा देने का आदेश जारी किया । आप श्री एक छोटे से स्थान पर निवास करने लगे । तथा बम्बई कारपोरेशन ने मकान गिर जाने के पश्चात उस भूमि को स्कूल के वास्ते अधिग्रहण करने का प्रस्ताव पास किया । और कलेक्टर के अधिग्रहण करने के नोटिस जारी हो गये । किन्तु आपश्री के प्रयास से पुनः बम्बई कारपोरेशन ने भूमि न लेने का प्रस्ताव पास कर मकान बनाने की आज्ञा दी । उसी स्थान पर भवन निर्माण करा कर "लाल मणी भवन " नाम दिया । जो कि आज भूलेश्वर में आत्माराम मर्चेंट रोड पर २५ /३१ लालमणी बिल्डिंग के नाम से है।

सन् १९६१ के दिसम्बर मास की ९/१०की रात्रि को जतीपुरा (मथुरा)के गिरधर निवास में एक बड़ी चोरी हुई जो बावरिया जाति के जरायम पेशा लोगों ने की थी - चोरी करने वाले चोर मुजफ्फरनगर (उ. प्र.) में पकड़े गये और कुछ माल भी बरामद हुआ । उस समय आपश्री को भयंकर शीतकाल में मुजफ्फरनगर की यात्रा करनी पड़ी थी ।

ब्रजयात्रा :-आप श्री ने सन् १९६५ में ब्रजयात्रा प्रारंभ की और तभी अचानक भारत पाकिस्तान युद्ध छिड़ गया तो कलेक्टर मथुरा के द्वारा आगे जाने की आज्ञा नहीं दी गई और यह ब्रज चौरासी कोस की यात्रा मथुरा में ही समाप्त कर देनी पड़ी । इस ब्रजयात्रा के रद्द हो जाने से आये वैष्णवजनों को हार्दिक कष्ट न हों इसलिये आपश्री - - जी अलग - अलग मनेरथ कराने निश्चय किया आप श्री ने मथुरा में नाव का मनोरथ किया जिसमें श्री - - जी नाव में श्यामघाट से विश्रामघाट तक पधराया, गोकुल में श्री जी को ठुकरानी घाट पर पधराकर मनोरथ करवाया, तथा मथुराधीश प्रभु के प्राकट्य स्थल करनावल में

मनोरथ करवाया,और राधाकुण्ड के बैठक, चन्द्र सरोवर की बैठक, गुलाल कुण्ड बैठक, गोविन्द कुण्ड बैठक (आन्यौर) तथा सुरभीकुण्ड आदि स्थानों पर श्रीमथुरादासजी को पधराकर नई -नई सामग्रियाँ आरोगाकर लाड़ लडाया और मनोरथ किये ।

सन् १९९८ में आपश्री जन्माष्टमी के उत्सव पर जतीपुरा पधारे हुए थे और उस वर्ष कोई भी गोस्वामी बालक ब्रज चौरासी कोस की यात्रा करने तैयार नहीं थे और इस बार ब्रजवासियों ने सोचा कि प्रथमेश जी महाराज आजकल जतीपुरा ब्रजभूमि में ही विराज रहै हैं और उनसे ब्रजयात्रा करने के लिये माथुर चतुर्वेदी समाज के लोग तथा ब्रजवासियों ने आग्रह किया और अपने सरल भाव के साथ हो, सब लोगों का आग्रह स्वीकार किया और आठ दिन के अन्दर -अन्दर ही ब्रज चौरासी कोस की यात्रा उठाई जो कि एक अभूतपूर्व ब्रज यात्रा के रूप से जानी गई क्योंकि

इस यात्रा में आपश्री नित्य प्रवचन द्वारा प्रत्येक स्थल के स्वरूप को समझाते थे ।

उपसंहार

सन् १९८९ के सितम्बर मास में आप श्री जोधपुर (राज.) पधारे वहाँ परिषद के संगठन हेतु प्रवचन किये वहां से ही श्री हरिरायजी के उत्सव के लिये जैसलमेर (राज.) पधारे। आपश्री के पधारने से जैसलमेरवासी यह अनुभव करने लगे कि फिर श्री हरिराय जी ने पधार कर वैष्णवों पर अनुकम्पा की है । जैसलमेर में निकली शोभा यात्रा अभूतपूर्व थी आप श्री के साथ में शोभायात्रा में जैसलमेर महारावल स्वयं पैदल चल रहे थे । दरबार नित्यप्रति आपश्री के प्रवचन में भी पधारते थे । दरबार ने स्वयं आप श्री की पधरामनी अपने महल में की थी । इस अवसर पर परिषद के अनेकों वैष्णवों ने परिषद् की आजीवन सदस्यता ग्रहण की । सैकड़ों वैष्णवों ने ब्रह्मसम्बन्ध की दीक्षा ली । दो वैष्णव वल्लभ सम्प्रदाय,(पुष्टिमार्ग) को नहीं मानते थे और सदैव इसका विरोध करते थे । उन्होंने भी आप श्री से प्रभावित हो कर दीक्षा ग्रहण की ।

जैसलमेर के तीन दिन प्रवास के पश्चात आप श्री पुनः जोधपुर पधारे और वहाँ से वायुयान द्वारा दिल्ली हो कर कलकत्ता पधारे । कलकत्ता में दिनांक १ अक्टूबर को "श्री राम शिला पूजन " किया और एक महती सभा को सम्बोधित किया ।

दिनांक २५ दिसम्बर १९८९ को आप श्री की राजधानी एक्सप्रेस से अपने निजी स्वरूपों को कलकत्ता से पधरा कर शाम को दिल्ली पधारे । राजधानी छैः घन्टे लेट होने से सायंकाल दिल्ली आकर पहुँची । दिल्ली से फरीदाबाद अपने निवास पर अपने स्वरूपों सहित पधारे ।वहाँ स्वरूपों की सेवा व राजभोग आदि की व्यवस्था हमने पहले से ही जाकर रखी थी । सभी वैष्णवों ने प्रसाद लिया और रात्रि नौ बजे आपश्री ने आज्ञा की कि अभी जतीपुरा चलना है ।मैंने विनती की कि कृपानाथ ठंड(सर्दी) बहुत है व रात्रि

का समय है ऐसे समय में निकलना ठीक नहीं है । किन्तु आपश्री ने कहा कि यहा पर श्री जी के शैया आदि की व्यवस्था नहीं है अतः जतीपुरा अभी चलना है और रात्रि साढ़े नौ बजे रात्रि को ही फरीदाबाद से स्वरूपों व वैष्णवों सहित चार मोटर कारों में प्रयाण किया रास्ते में सर्दी अधिक होने से कोहरा इतना घना था कि १० फुट की दुरी की वस्तु दिखाई नहीं देती थी इसलिए प्रातः काल दो वजे जतीपुरा पहुँचे । आपश्री ने श्रीजी को शैया मंदिर में शयन कराया और इसके वाद स्वयं पोढ़े ।

दिनांक २६ दिसम्बर १६८६ को आप श्री जतीपुरा से कोटा पधारे । मैं आपश्री के साथ हो आया । दिनांक १ जनवरी १६६० को कोटा दरबार महाराव भीमसिंह जी के पोते के यज्ञोपवीत संस्कार में शामिल होने के लिये दरवार ने आपश्री को कोटा पधराया। दरबार महाराज कुमार व अन्य सरदार सभी ने आपश्री की अगवानी द्वार पर की । आपश्री ने भवरजी को मंत्र दीक्षा दी । वह समारोह देखने योग्य था । कितने ही राजा - महाराजा, जागीरदार व विदेशी मेहमान इस समारोह में थे । आपश्री का दरबार ने स्वयं कई मेहमानों से परिचय कराया । वापसी पर महाराज कुमार ने आपश्री की कार का दरवाजा खोलकर गाड़ी में पधराया । मंदिर आने पर आपश्री ने आज्ञा की "लालाजी ! ऐसा समारोह अब हमारा अन्तिम समारोह है । अब आगे ऐसा समारोह देखने को नहीं मिलेगा ।" हाय रे!विधि की विडम्बना यह अन्तिम ही निकाला ।

दिनांक २ जनवरी १६६० की शाम को आपश्री ने कोटा से देहरादून एक्सप्रेस से फरिदाबाद के लिये प्रयाण किया - तीन जनवरी को प्रातः फरीदाबाद पहुँचे । दिनांक ४ जनवरी १६६० तदनुसार पौष शुक्ला अष्टमी सम्वत् २०४६ को फरीदाबाद करीब एक बजे दूरभाष पर आई तथा दूरभाष पर श्री विनोद जी दीक्षित ने कहा कि " आपश्री लीला कर गये "विश्वास नहीं हुआ ।

शोक!महाशोक !

दिनांक ५जनवरी १६६० को आपश्री की पार्थिव देह को फरीदाबाद से पधराया जतीपुरा ग्राम में यह दुःखद समाचार फैलते ही ग्राम की समस्त दुकान बाजार आदि तथा संस्थान तक बन्द हो गये ।

श्री गिरिराज जी, मुखारविन्द जतीपुरा में उस दिन दूध भी नहीं चढ़ा । सन्ध्या समय जब आपश्री के लालजी श्री लालमणी जी बम्बई से पधारे तब ग्राम वासियों के अति आग्रह पर आपश्री के श्रीमुख के दर्शन कराये और जीवन की अंतिम यात्रा प्रारंभ हुई । हरजी कुण्ड के पास आपश्री के श्रीअंग को लालजी श्री लालमणीजी द्वारा अग्नि को समर्पित किया गया । ग्राम जतीपुरा के पुरूष ही नहीं अपितु महिलाऐं भी श्मशान भूमि में आपश्री के अंतिम दर्शन हेतु आई ।यह एक अनौखी घटना थी क्योंकि महिलाऐं शमशान भूमि तक नहीं जाती हैं । बम्वई, कलकत्ता ,कोटा, आसाम,फरीदाबाद, दिल्ली, आगरा, मथुरा,जयपुर,धार,इन्दौर,झावुआ आदि देश के विभिन्न कोनों से वैष्णववृन्द आकर आचार्य

श्री के अन्तिम संस्कार में शामिल हुए । श्री गिरिराजजी की तरहटी में रहने वाले अनेक ग्रामों के लोग भी अन्तिम संस्कार में भाग लेने आये । कितने ही पुरूष और महिलाऐं फूट-फूट कर रो रहे थे उनके आँसू थम नहीं रहे थे ।

दसवें दिन दसा का घाट सुरभि कुण्ड पर हुआ । अनेक गोस्वामी बालक बहू -बेटियाँ पधारे थे सुरभी कुण्ड पर एक मेला जैसा लग गया था । देश व विदेश से अनेक वैष्णव भी दसा के घाट में शामिल होने जतीपुरा आये थे । सैकड़ों वैष्णवों ने मुण्डन कराया था ।

द्वादशा के दिन द्वादशा का कर्म संपन्न हुआ और जतीपुरा, आन्यौर, पूँछरी,गोवर्द्धन, राधाकुण्ड, तथा चन्द्र सरोवर, गाँठौली के ब्राह्मण व ब्रजवासियों को भोजन कराया गया। यह कार्यक्रम रात्रि के ग्यारह बजे तक चलता रहा । करीब दस हजार लोगों ने भोजन किया । जतीपुरा ग्राम देश व विदेश से आये हुए वैष्णवों से खचाखच भरा हुआ था । गिरधर निवास की बारह द्वारी में एक शोक सभा का आयोजन हुआ, जिसमें सभी गोस्वामी बालकों विद्वानों व परिषद् के कार्य कर्ताऔं व अनेक संस्थाओं के प्रतिनिधियों द्वारा अपने -अपने श्रद्धा सुमन अपने प्रिय आचार्य श्री को अर्पण किये ।

कहाँ तक लिखा जाये ! आपश्री के जीवन पर तो जितना लिखा जाये कम है दास की क्या सामर्थ्य है जो कुछ भी लिखा है वह आपश्री की प्रेरणा से लिखा है । अन्त में इतना ही लिखना है कि आपश्री का जीवन संघर्षमय था और जीवन में कभी हार नहीं मानी परन्तु इस "जरा" (बुढ़ापा) के सन्धिकाल को देखकर रण छोड़ कर क्यों चले गये।

प्रथम पीठ के सेव्य स्वरूप प्रभु श्री मथुराधीशजी

महाप्रभु श्री मद्वल्लभाचार्यजी जब दैवी जीवों का उद्धार करने के लिए पृथ्वी परिक्रमा करते हुए कान्यकुब्ज प्रदेश के अन्तर्गत कन्नोज पहुँचे तो वहाँ श्रीमद्भागवत के उच्चकोटि के कथावाचक पौराणिक श्री पद्मनाभदास व्यास उनके सेवक बने । प्रवास के समय प्रायः महाप्रभुजी के साथ रहने लगे । उनकी गुरूभक्ति परमोच्च कोटि की थी । वे महाप्रभुजी की आज्ञा को सर्वोपरि मानते थे और आपश्री को किसी प्रकार का कष्ट न हो इसका पूरा ध्यान रखते थे । आपश्री के उपदेशों के अनुसार ही आचरण करते हुए उन्होंने आजीविका के लिए श्रीमद्भागवत की कथा न कहने का दृढ़ संकल्प भी कर लिया था ।

एक बार पद्मनाभदास ने महाप्रभुजी से विनती की कि मेरी इच्छा भगवत्सेवा करने की है । यदि स्वयं प्रादुर्भूत स्वरूप की सेवा का अवसर मिले तो बहुत अच्छा हो । महाप्रभुजी ने आज्ञा की -

"यदि तुम्हारा उत्कट विरह भाव होगा तो भक्त पराधीन बन जाने वाले कृपालु भगवान् तुम्हारा मनोरथ अवश्य परिपूर्ण करेगें । "

कुछ दिनों बाद महाप्रभुजी गोकुल पधारे । संवत् १५५६ फाल्गुन शुक्ला ११ के दिन सूर्य अर्धास्त के समय गोकुल के तीन कोस पर कर्णावल श्री यमुनाजी के तट पर संध्या कर रहे थे और पद्मनाभदास आपके सम्मुख बैठे थे । तभी श्री यमुनाजी का वालुकामय तट यमुना जल में गिरने लगा । वहाँ एक विशाल भगवत्स्वरूप प्रकट हुआ । उसके दर्शन कर पद्मनाभदास ने प्रार्थना की - "प्रभो !आपके इस विशाल स्वरूप की सेवा कोई मनुष्य कैसे कर सकेगा ? तब वह भगवत् स्वरूप छोटे आकार का वन गया । वे प्रभु आकर श्रीवल्लभाचार्यजी की गोद में विराज गये । तब महाप्रभु श्री वल्लभाचार्यजी ने पद्मनाभदास को आज्ञा की - " जैसे प्रहलाद आदि के दुःखों को दूर करने के लिए भगवान् प्रकट हुए थे । उसी प्रकार पुष्टिमार्गीय भक्तों को भजनानन्द का सुख देने के लिए भगवान् इस स्वरूप में प्रभु प्रकट हुए हैं । " श्री वसुदेवजी को भी मथुरा में पूर्ण पुरूषोत्तम ने चतुर्भुज रूप में दर्शन दिये थे किन्तु वसुदेवजी की प्रथना से से उन्होंने चतुर्भुज रूप छिपाया था । वह स्वरूप ही पुनः प्रकट हुआ था अतः ठाकुरजी के इस स्वरूप का नाम मथुधीशजी कहा गया । श्री मद्भागवत में 'मधुरा ' कहा गया है-'मधुरानाम वे पुरीम् '।

भक्तों का विश्वास हैं कि महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने ' मधुराष्टक ' में ठाकुरजी के मधुराधीश रूप काही वर्णन किया है - ' मधुराधिपते रखिलं मधुरम् ' । वेदों में भी प्रभु को रस रूप कहा गया हैं।

श्री मथुराधीशजी के स्वरूप में प्रमेय प्रकरण के प्रथम अध्याय की गोपाष्टमी गौचारण की तालवन लीला प्रकट तथा अन्य प्रकरणों की लीला गुप्त है ।

आप चतुर्भुज हैं अतः आपकी वन्दना इस प्रकार की जाती हैं : -

चतुर्भुजं घनश्यामं लसन्मकरकुण्डलम् ।

सुरेशवन्दितं मथुरेशं नमाम्यहम् ।।

चतुर्भुज स्वरूप होने का एक रहस्य यह हैं कि पुष्टिकार्य चार क्रियाओं से सम्पन्न होता है - (१)स्वानन्ददान(२) स्वानन्द-विषयक -प्रतिवन्धक का निवारण (३) स्वसेवा और (४) आधिदैविक भाव की परम्परा का उद्‌बोधन । पुष्टिप्रभु ये चारों ही कार्य करते हैं अतः आपने चतुर्भुज रूप धारण किया है ।

श्री मथुराधीश प्रभु शंख, चक्र ,गदा , और पद्म धारण करते है : क्रीड़ा उपयोगी अलौकिक तेज का मूल तत्व ' चक्र ' है । अलौकिक जल का मूल तत्व 'शंख ' है , अलौकिक वायु का मूलतत्व ' गदा' है और अलौकिक पृथ्वी का मूल तत्व 'पद्म' है ।

भगवान की नित्य अलौकिक लीला में विभिन्न यूथ हैं। प्रत्येक यूथ की यूथनायिका है। ये यूथनायिकाएँ रसात्मक प्रभु , आनन्दस्वरूप मधुराधिपति का कभी त्याग नहीं करती। वे क्रीड़ा के उपयोगी पदार्थ का रूप धारण करके भी सदा प्रभु के निकट रहते हुए रसात्मक स्वरूप के आनन्द का अनुभव करती है। इसी कारण प्रभु की तुर्यप्रिया श्री यमुनाजी शंखरूप होकर नीचे के दक्षिण श्री हस्त में विराजती हैं । श्री स्वामिनीजी पद्मरूपा होकर ऊपर के दक्षिण श्री हस्त में विराजमान है ; राधा- सहचरी -स्वरूप कुमारिका ऊपर के वाम हस्त में 'गदा 'रूप होकर विराज रही है और श्री चन्द्रावलीजी नीचे के नाम के वाम हस्त में 'चक्र' रूप होकर विराजमान है; इसी भाव को द्वारकेशजी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

सव व्रज को रस-रूप स्वरूप ।

चार भुजा चारों कर आयुध, कमल स्वामिनी रूप ।

चक्र तेज चन्द्रावलिजू को , शंख श्री यमुना जानौ ।

गदा कुमारी श्याम वरण वपु, 'द्वारकेश ' मन आनौ ।।

वहिरंग लीला की दृष्टि से विचार करें तो श्री मथुराधीश प्रभु ने ध्वनि मात्र से दैत्यों का गर्व ध्वंस करने के लिए 'शंख',भक्तों का ताप दूर करने के लिए 'कमल' अस्त्रों का तेज दूर करने के लिए 'गदा ' और दैत्यों को मुक्ति देने के लिए 'चक्र ' धारण किया है।

श्री मथुराधीश जी का गोल पीठक गोपीजनों के गोलाकार रासमण्डल का रूप हैं। पीठक में आठ स्वरूपों विराजते है । वे प्रभु के आठ अन्तरंग सखा है ।

जव श्री मथुराधीश प्रभु ने पद्मनाभदास की प्रार्थना स्वीकार कर साततात वृक्ष के समान विशाल स्वरूप लुप्त करके २८ अंगुल का स्वरूप धारण कर लिया और

श्रीमद्वल्लभाचार्यजी की गोद में विराज गये तव आचार्य श्री ने पद्मनाभदास के माथे वह स्वरूप सेवा के लिए पधरा दिया । पद्मनाभ दास ने अपने परिवार के साथ प्रभु की भावमयी सेवा की । उनकी सेवा से प्रभु वहुत प्रसन्न रहते थे । यदि सेवाक्रम में कोई भूल हो जाती थी तो स्वयं आज्ञा करके सेवा करा लेते थे । प्रभुकृपा से पद्मनाभदास को अलौकिक सामर्थ्य प्राप्त हुआ था । उनके पास यदि कोई व्यक्ति किसी मनोरथ से आता तो उसका मनोरथ सिद्ध हो जाता था ।

पद्मनाभदासजी की वेटी तुलसां और पुत्रवधू पार्वती ने मधुराधीश प्रभु की स्नेहात्मिका सेवा की । पार्वतीबाई के लीला प्रवेश के वाद ठाकुरजी श्री गुसांई के पास पधारे । गुसांई जी ने यह स्वरूप अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री गिरधरजी को पधराया । श्री गिरधरजी के लीला प्रवेश के बाद उनके तृतीय पुत्र श्री गोपीनाथजी ने श्री मथुराधीश प्रभु को श्रीनाथजी के पास से अपने घर पधराया । अतः आपको श्री मथुराधीश जी के घर के वड़े तिलकायत भी माना जाता है ।

श्री गोपीनाथजी दीक्षित के बाद श्री वल्लभजी प्रभुजी ,श्री रणछोड़जी, श्री गिरधरजी,श्री गोपीनाथजी ,श्री प्रभुजी , गिरधर जी, गोविन्दजी, प्रभुजी, विट्ठलनाथजी कन्हेयालालजी , श्री रणछोड़जी , श्री गिरधरजी क्रमशः प्रथम पीठ के तिलकायत आचार्य हुए । इनके वाद श्री रणछोड़ाचार्यजी प्रथमेशजी हुए । उनके लीला प्रवेश के वाद गो.श्री विट्ठलनाथजी प्रथम पीठ के तिलकायत पद पर आसीन हुए है :

प्रस्तुति -डा. गजानन शर्मा

जहां तक मन में वैष्णवता के बीज नहीं आयेंगे तब तक परिषद् का कार्य होना संभव नहीं है.

—प्रथमेश

श्री मथुराधीश प्रभु के प्रथम सेवक श्री पद्मनाभदास

श्री पद्मनाभदास कन्नोजनिवासी कन्नोजिया ब्राह्मण थे । ये उच्चकोटि के,प्रभावशाली कथावाचक थे । श्रीमद्वल्लभाचार्य महाप्रभु के सेवक बनने के बाद इन्होंने संकल्प कर लिया कि वे भागवत का पाठ सर्वहेतु छोड़कर करेगें, भागवत की कथा वृत्ति के लिए, आजीविका के लिए नहीं करेगें । इनके बाद ये यजमानी करने लगे । लेकिन शीघ्र ही आपको ग्लानि हुई कि वैष्णव बनने के बाद भिक्षा माँगने का कार्य सर्वथा अनुचित है । अन्ततः वे कौड़ी बेचकर थोड़ा सा धन परिवार के भरण पोषण के लिए एकत्र करने लगे। शेष पूरा समय वे ठाकुरजी की सेवा में ही लगाते थे ।

श्री महाप्रभुजी की कृपा से यमुना का किनारा ढहने पर श्री मथुराधीश प्रभु पद्मनाभदासजी को सनाथ करने के लिए प्रकट हुए । श्री महाप्रभु जी ने मथुरेशजी पद्मनाभदासजी के माथे सेवा के लिए पधराये । पद्मनाभदासजी महाप्रभु जी की आज्ञा को सर्वोपरी मानते थे । एक बार एक पहर रात बीतने पर महाप्रभु जी ने इन्हें प्रयाग से अडेल जाकर अ ाजी को पधराने की आज्ञा की तो आप निकल पड़े । स्वयं ठाकुरजी ने नाविक बालक का रूप धारण कर इनके गुरू-आज्ञा -पालन के धर्म को निबाह किया था ।

एक बार एक व्यापारी महाप्रभुजी एवं उनके सेवकों के पीछे चल रहा था । किसी कारण वह ज्यादा पीछे रह गया और चोरों ने उसे लूट लिया ।वह रोता हुआ महाप्रभुजी के डेरे पर गया । उस समय महाप्रभुजी का भोजन का समय था । अतः पद्मनाभदास ने महाप्रभुजी के भोजन में विघ्न न पड़े इस लिए इसे एक साहूकार के पास ले जाकर उसकी क्षति पूर्ति करवा दी । इस ऋण के बदले में पद्मनाभदास ने अपना धर्म साहूकार के यहाँ गिरवे रख दिया । लेकिन आचार्यश्री के भोजन में विलम्ब नहीं होने दिया । ऐसी उत्कृष्ट गुरूभक्ति थी आपकी । उस साहूकार का कर्ज उतारने के लिए आपने एक राजा के यहाँ जाकर महाभारत की कथा सुनायी और दक्षिणा के रूप में केवल उतना ही धन स्वीकार किया,जितना उस साहूकार में मूलधन और ब्याज के रूप में देना था । अधिक धन लेने से इन्कार कर दिया ।

पद्मनाभदास अपने वचन को अटल मानते थे । एक वैष्णव के कहने पर आपने अपनी लड़की के लिए एक सनोढिया ब्राह्मण के लड़के को तिलक कर दिया । जब आपकी बड़ी लड़की ने कहा कि वह लड़का अपनी जाति का नहीं है अतः सगाई फेर देना चाहिए तो आपका स्पष्ट उत्तर था कि मेरा अँगूठा काट दो जिससे मैंने तिलक किया है तभी सगाई फेरने पर विचार करूगा । सच्चा वैष्णव ऐसा ही सत्यनिष्ठ होता है ।

आपके चरणोदक के प्रताप से एक स्त्री की सन्तान की मनोकामना पूर्ण हुई थी और उसने अपने पुत्र का नाम मथुरादास रखा था ।

उसने अपने पुत्र का नाम मथुरादास रखा था ।

बड़े रामदासजी अपने ठाकुर पद्मनाभदास के घर पधरा गये थे । उसके कन्नोज पर मुगलों का आक्रमण हुआ तो एक मुगल इनके घर से रामदासजी के ठाकुरजी ले गया। आप सात दिन तक अन्न -जल छोड़कर अपने प्राणों की परवाह न करते हुए उस मुगल के पीछे लगे रहे । अन्ततः इनके सत्याग्रह से मुगलानी का हृदय पसीजा और उसने ठाकुरजी वापस दिलवाये । जीवन दाँव पर लगा कर भी वैष्णव के ठाकुर जी इन्होंने विधर्मी के हाथ में नहीं जाने दिये ।

एक बार पद्मनाभदास सपरिवार अड़ेल गये । वहाँ नित्य आचार्य श्रीमहाप्रभुजी के वचनामृत सुनते और ठाकुरजी की सेवा करते थे । धन पास में कम ही था । वह भी पूरा होने आया । तव आप भीगे हुए चने तल कर पत्तल पर दाल, भात, खीर, कढ़ी, रोटी, साग आदि की भावना से अलग अलग ढेरी वना देते थे । महाप्रभुजी ने इनके उच्चकोटि के भाव और धैर्य की बहुत प्रशंसा की । आपका मन श्री मथुराधीशजी की सेवा में इतना रमा हुआ था कि धन की कमी होने पर भी भगवत्सेवा छोड़ कर धनोपार्जन में समय नहीं लगाते थे ।

अ ाजी को पद्मनाभदास के धनाभाव की जानकारी मिल गयी । आपने दो दिन तक सीधी सामग्री पद्मनाभदास की पुत्री तुलसा के पास भिजवायी । पद्मनाभदास ने गुरूगृह की सामग्री का उपयोग नहीं किया । राजभोग के समय ठाकुरजी श्री मथुराधीशजी से पूछा कि कृपानाथ आपकी इच्छा आचार्यश्री के घर पधार कर नानासामग्री आरोगने की हो तो वहाँ पधरा दूँ । लेकिन कृपानिधान प्रभु मथुराधीशजी ने आज्ञा की -"मुझे तो तेरी सामग्री भाती है । तू जो सामग्री धरेगा वह में प्रेम से आरोगूँगा ।"ऐसे थे भक्त और भगवान् के अंतरंग संबंध । पद्मनाभदास ने तुलसां के द्वारा अ ाजी को दोनों दिनों की सीधा सामग्री लौटा दी महाप्रभुजी से आज्ञा लेकर अपने घर वापस लौट आये । जीवन की विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने देवद्रव्य और गुरू द्रव्य का उपभोग नहीं किया । आचार्य श्री के उपदेशानुसार सच्चे वैष्णव का जीवन जिया श्री गोकुलनाथजी ने आज्ञा की है -" पद्मनाभदासजी के समान धर्म में आग्रह रखने वाले वैष्णव बिरले हैं ।

पद्मनाभदासजी का पूरा परिवार भगवत्सेवा परायण था । उनकी पुत्री तुलसां अत्यन्त भावमयी भगवत्सेवा करती थी तथा वैष्णवों की सेवा करती थी । महाप्रभुजी के ग्रंथों का पाठ और मनन करते हुए निश्चिन्त और समर्पित जीवन जीती थी । पद्मनाभदासजी की पुत्रवधू पार्वती भी परम भगवदीय थी । उसके हाथ- पाँव चर्मरोग के कारण सफेद हो गये थे । लेकिन श्री गुसाईजी की आज्ञानुसार वह विश्वास पूर्वक प्रभु-सेवा करती रही और रोग मुक्त भी हो गयी । ठाकुरजी उसके द्वारा समर्पित रूखी- सूखी सामग्री भी स्नेह पूर्वक आरोगते थे । उसकी तदीयता से उसके पुत्र रघुनाथदास का अहं गल गया और वह माता की आज्ञानुसार ठाकुरजी की सेवा करने लगा था ।

बड़े रामदासजी अपने ठाकुर पद्मनाभदास के घर पधरा गये थे । उसके कन्नोज पर मुगलों का आक्रमण हुआ तो एक मुगल इनके घर से रामदासजी के ठाकुरजी ले गया। आप सात दिन तक अन्न -जल छोड़कर अपने प्राणों की परवाह न करते हुए उस मुगल के पीछे लगे रहे । अन्ततः इनके सत्याग्रह से मुगलानी का हृदय पसीजा और उसने ठाकुरजी वापस दिलवाये । जीवन दाँव पर लगा कर भी वैष्णव के ठाकुर जी इन्होंने विधर्मी के हाथ में नहीं जाने दिये ।

एक बार पद्मनाभदास सपरिवार अड़ेल गये । वहाँ नित्य आचार्य श्रीमहाप्रभुजी के वचनामृत सुनते और ठाकुरजी की सेवा करते थे । धन पास में कम ही था । वह भी पूरा होने आया । तब आप भीगे हुए चने तल कर पत्तल पर दाल, भात, खीर, कढ़ी, रोटी, साग आदि की भावना से अलग अलग ढेरी बना देते थे । महाप्रभुजी ने इनके उच्चकोटि के भाव और धैर्य की बहुत प्रशंसा की । आपका मन श्री मथुराधीशजी की सेवा में इतना रमा हुआ था कि धन की कमी होने पर भी भगवत्सेवा छोड़ कर धनोपार्जन में समय नहीं लगाते थे ।

अ ाजी को पद्मनाभदास के धनाभाव की जानकारी मिल गयी । आपने दो दिन तक सीधी सामग्री पद्मनाभदास की पुत्री तुलसा के पास भिजवायी । पद्मनाभदास ने गुरूगृह की सामग्री का उपयोग नहीं किया । राजभोग के समय ठाकुरजी श्री मथुराधीशजी से पूछा कि कृपानाथ आपकी इच्छा आचार्यश्री के घर पधार कर नानासामग्री आरोगने की हो तो वहाँ पधरा दूँ । लेकिन कृपानिधान प्रभु मथुराधीशजी ने आज्ञा की -"मुझे तो तेरी सामग्री भाती है । तू जो सामग्री धरेगा वह में प्रेम से आरोगूँगा ।"ऐसे थे भक्त और भगवान् के अंतरंग संबंध । पद्मनाभदास ने तुलसां के द्वारा अ ाजी को दोनों दिनों की सीधा सामग्री लौटा दी महाप्रभुजी से आज्ञा लेकर अपने घर वापस लौट आये । जीवन की विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने देवद्रव्य और गुरू द्रव्य का उपभोग नहीं किया । आचार्य श्री के उपदेशानुसार सच्चे वैष्णव का जीवन जिया श्री गोकुलनाथजी ने आज्ञा की है -" पद्मनाभदासजी के समान धर्म में आग्रह रखने वाले वैष्णव बिरले हैं ।

पद्मनाभदासजी का पूरा परिवार भगवत्सेवा परायण था । उनकी पुत्री तुलसां अत्यन्त भावमयी भगवत्सेवा करती थी तथा वैष्णवों की सेवा करती थी । महाप्रभुजी के ग्रंथों का पाठ और मनन करते हुए निश्चिन्त और समर्पित जीवन जीती थी । पद्मनाभदासजी की पुत्रवधू पार्वती भी परम भगवदीय थी । उसके हाथ- पाँव चर्मरोग के कारण सफेद हो गये थे । लेकिन श्री गुसाईजी की आज्ञानुसार वह विश्वास पूर्वक प्रभु-सेवा करती रही और रोग मुक्त भी हो गयी । ठाकुरजी उसके द्वारा समर्पित रूखी- सूखी सामग्री भी स्नेह पूर्वक आरोगते थे । उसकी तदीयता से उसके पुत्र रघुनाथदास का अहं गल गया और वह माता की आज्ञानुसार ठाकुरजी की सेवा करने लगा था ।

पार्वती के लीला प्रवेश के बाद ठाकुरजी श्री मथुराधीशजी श्री गुसांईजी के घर पधराये गये ।

प्रस्तुति -डा. गजानन शर्मा

श्री मथुरेशजी के घर के तिलकायतों का वंशवृक्ष
प्रथम गृह के तिलकायत
श्री मद्वल्लभाचार्य की पीढ़ी
(१) जगद्गुरु श्रीमद्वल्लभाचार्य महाप्रभुजी
संवत् १५३५ वैशाख कृष्णा ११
(२) श्री गोपीनाथजी
सं. १५६७ आश्विन कृष्णा १२
(२) श्री विट्ठलनाथजी गुसांईजी
सं. १५७२ पौष कृष्णा ९
प्रथम
(३) श्री गिरधरजी- १५९७
द्वितीय
(४) श्री गोपीनाथजी दीक्षित सं. १६३८
तृतीय
(५) श्री वल्लभजी प्रभुजी सं. १६६०
चतुर्थ
(६) श्री रणछोड़जी सं. १६७७
पंचम
(७) श्री गिरधरजी सं. १७२५ (१७२६, १७२७, १७२८)
षष्ठ
(८) श्री गोपीनाथजी सं. १७४५ (१७४७)
सप्तम्
(९) श्री प्रभुजी सं. १७७१
अष्टम्
(१०) श्री गिरधरजी सं.. १७९२
नवम्
(१०) श्री गोविंदजी सं. १७९७
दशम्
(१२) श्री प्रभुजी (श्री वल्लभजी १८३७)
(१८४५, १८४८, १८६०)
(९) श्री मधुरामलजी सं. १७७४
(११) श्री गोकुलनाथजी सं. १७९९
(११) श्री विट्ठलनाथजी १८१७
एकादश
(१०) श्री विट्ठलनाथजी (श्री कन्हैयालालजी)
(१८८८, १८६८) १८७८
द्वादश
(११) श्री रणछोड़लालजी सं. १९०८
त्रयोदश
(१६) श्री गिरधरजी (श्री द्वारकेशलालजी) १९४४
चतुर्दश
(१७) श्री रणछोड़लालजी प्रथमेश (श्री वल्लभलालजी)
सं. १९८८, ज्येष्ठ कृष्णा ५
पंचदश
(१८) श्री विट्ठलनाथजी (लालमणिजी) सं. २००८
श्री प्रभुजी बाबाश्री
श्री अनिरुद्ध बाबाश्री
(७) श्री जीवनजी (दामोदरजी) सं. १७२८
(८) श्री विट्ठलेशजी सं. १७९१
(९) श्री वल्लभजी सं. १८४१
(४) श्री दामोदरजी १६३२
(५) श्रीविट्ठलरायजी
(टिपारावाला) सं. १६५७
(१६) श्री गिरधारीजी सं. १६८९
(७) श्री काकावल्लभजी सं. १७०३
(८) श्री गिरधरजी सं. १७२८
(९) श्री विट्ठलेशजी सं. १७४७
(१०) श्री द्वारकेशजी सं. १७४४
(११) श्री दामोदरजी सं. १८२०
(१२) श्री विट्ठलेशजी सं. १८४१
(१३) श्री लालमणिजी सं. १८७२
(१४) श्री विट्ठलेशजी
(लाल साहब) सं. १८९१
(१५) वल्लभलालजी सं. १९१५
(श्री रवजी भाई पटेल के आधार पर)
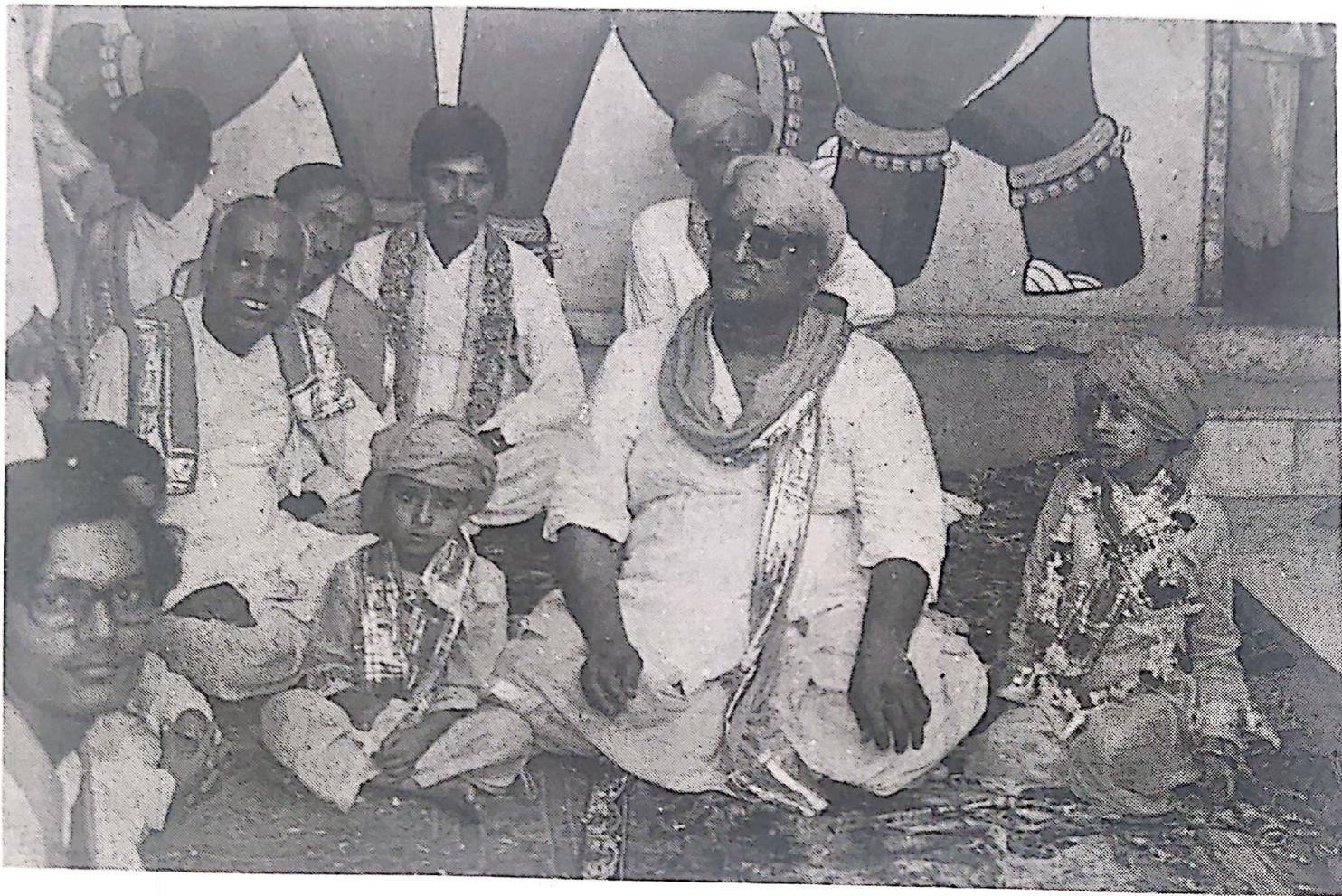
पौत्रों के साथ
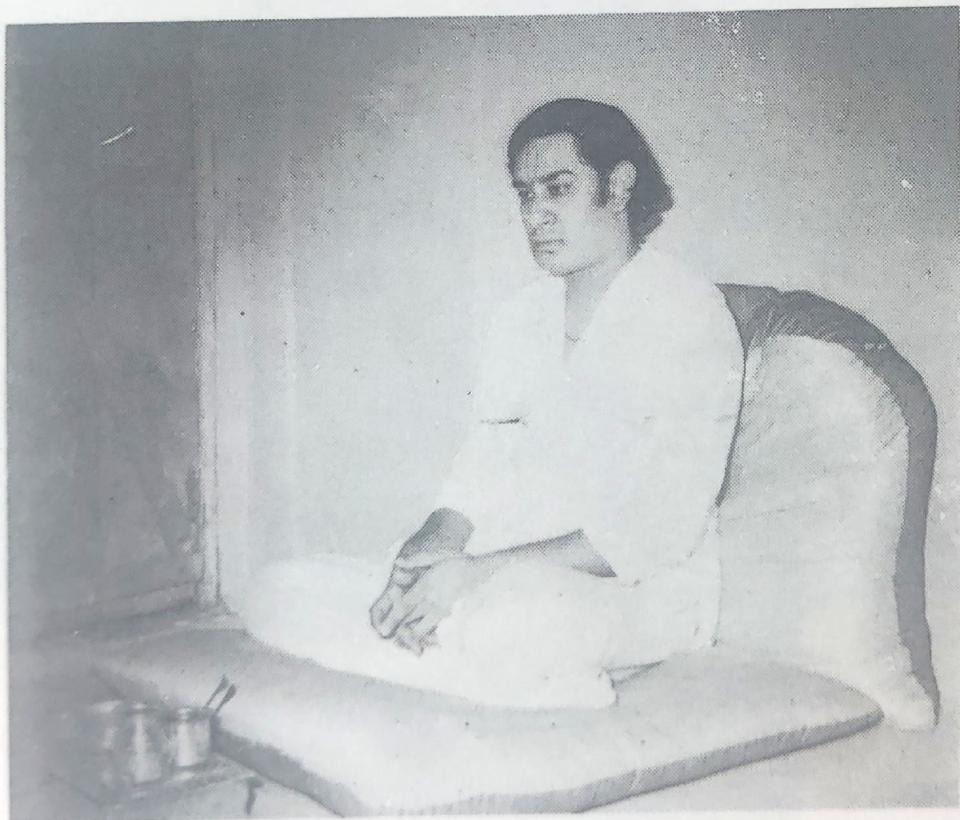
गृह-प्रवेश के अवसर पर
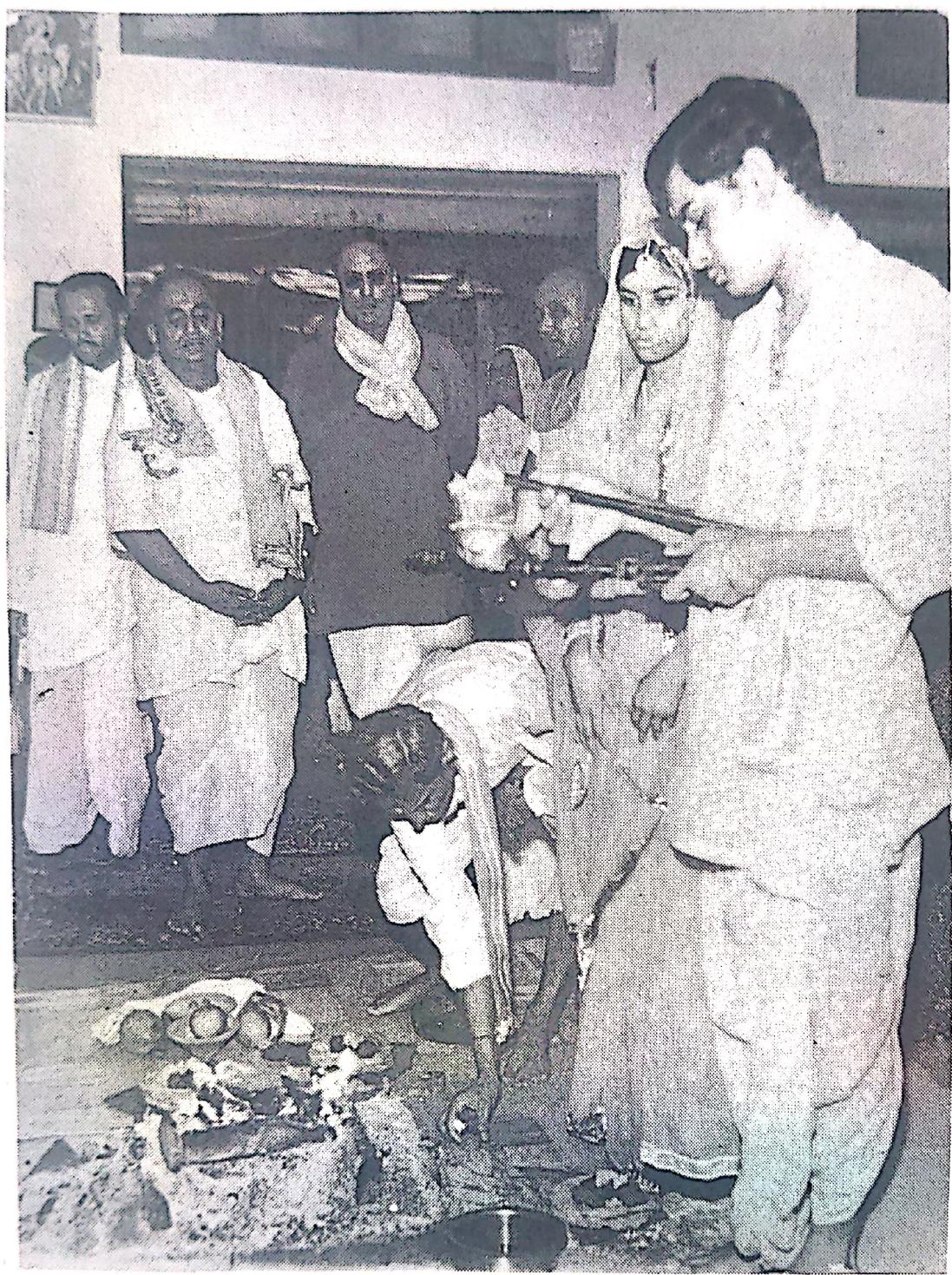
तीन पीढ़ियां

छप्पनभोग में श्रीठाकुरजी की झांपी पधराते हुए

उत्तराधिकारी वर्तमान प्रथम गृहाधिपति गो. श्री विट्ठलनाथजी (लालमणिजी)

पुत्र एवं पुत्रवधु के साथ श्री प्रथमेश

पितृचरण गो. द्वारकेशलालजी के लाड़िले पिताश्री के साथ

बहन के साथ पिताश्री की गोद में
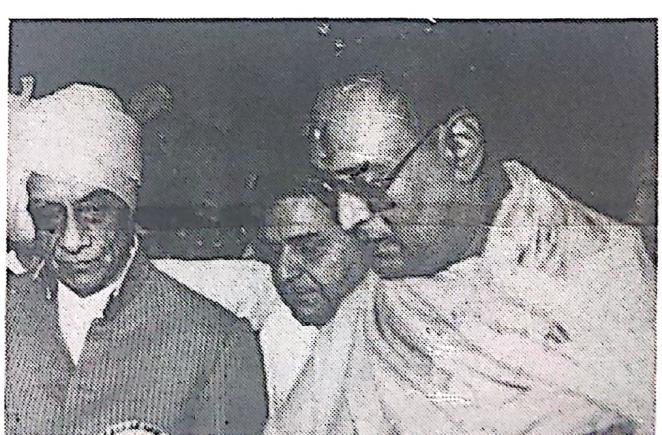
युवराज श्री प्रथमेश: यज्ञोपवीत प्रसंग

राजाधिराज प्रथम गृहाधिपति श्री प्रथमेश उदयपुर के महाराणा श्री भगवतसिंह के साथ

जेसलमेर के महारावल के राजमहल म पधरावनी

कोटा नरेश के साथ

क्या आपने सोचा है ?

आज वल्लभ संप्रदाय से नियंत्रण उठता जा रहा है । सभी अपनी मनमानी कर रहे हैं । समझ में नहीं आता कि इसका परिणाम क्या होगा । आचार्यों का नियंत्रण कभी का शिथिल हो चुका है । परस्पर रागद्वेष के कारण वैष्णव समाज में भी अनेक फिरके हो गये है । आपसी झगड़ों में ऐसा लगता है कि यादवों की आपसी लड़ाई हो रही है । धर्माचार्यों की अनवन और अपने आपको ऊँचा मानने के कारण प्राचीन परम्परा और सिद्धान्त छोड़कर विरोधाभास वाली आज्ञायें देते हैं जिससे समाज में अव्यवस्था फैल रही है ।

सत्संग मण्डल भगवान् के नाम लेने की बात तो करते हैं किन्तु उनमें धार्मिक बुद्धि के स्थान पर लौकिक विचार ही अलग दिखाई देते हैं । इनके मुखियों ने सभी समाज को छिन्न - भिन्न कर दिया है । किसी का गुण तो याद नहीं रहता, न शरण भावना ही है किन्तु एक बुरी बात को बरसों स्मरण रखते हैं । क्या यह प्रभु के नाम का प्रभाव है? जितना कपट अविश्वास और कलह मैंने वैष्णव समाज में पाया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इस समाज का उत्थान होगा ऐसी आशा करना निरर्थक है । यदि स्वार्थ की बात होगी तो उसे तुरन्त स्वीकार कर लेंगे किन्तु त्याग या संगठन की बात होगी तो यह उनके वस की बात नहीं है, जो सभी अपने ढंग में चलना चाहते हैं फिर भले ही आदर्शों की होली जलती रहे । हमारे देश एवं सम्प्रदाय में होली जलाने में भी एक आदर्श भावना है जिसमें मन के सभी मैल जला दिये जाते हैं और समाज सभी बुराइयों और वैर को छोड़कर मिलजुल कर फाग मनाता है । किन्तु पुष्टिमार्ग? क्या कहें भगवान् दया करें इन राह भटकों को मार्ग दिखायें। यही कहा जा सकता है ।